हंसराज कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय

हंस

वार्षिक पत्रिका
2026

साहिल

बी.ए. (विशेष) हिंदी, प्रथम वर्ष

ओइम्! विश्वानि देव सवितुर्दुरितानी परासुव।
यद्भद्रं तन्न आ सुव।।

हे सकल जगत् के उत्पत्तिकर्ता,
समग्र ऐश्वर्ययुक्त, शुद्धस्वरूप,
सब सुखों के दाता, परमेश्वर!
आप कृपा करके हमारे सम्पूर्ण दुर्गुण,
दुर्व्यसन और दुखों को दूर कर दीजिए,
जो कल्याणकारक गुण,कर्म,
स्वभाव और पदार्थ हैं,
वे सब हमको प्राप्त कराइये।

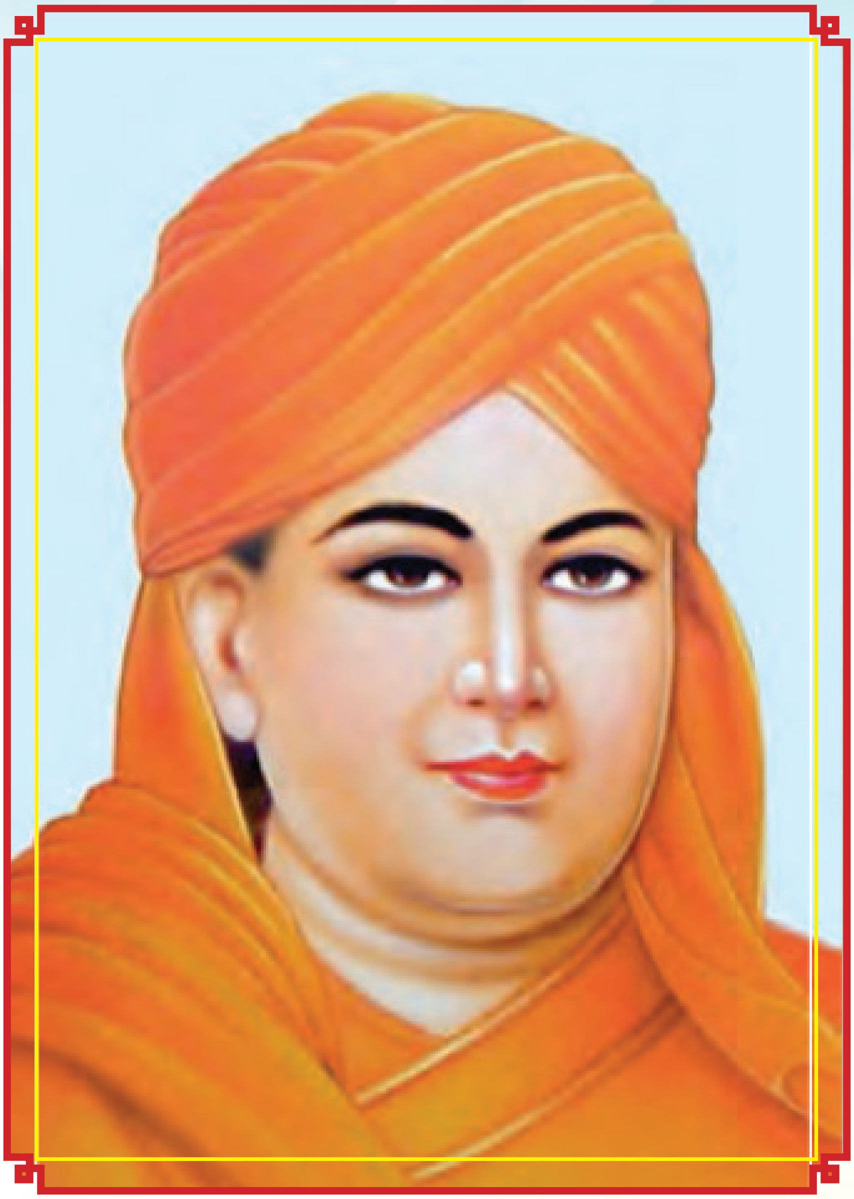

स्वामी दयानन्द सरस्वती

(1824–1883)

प्रेरक

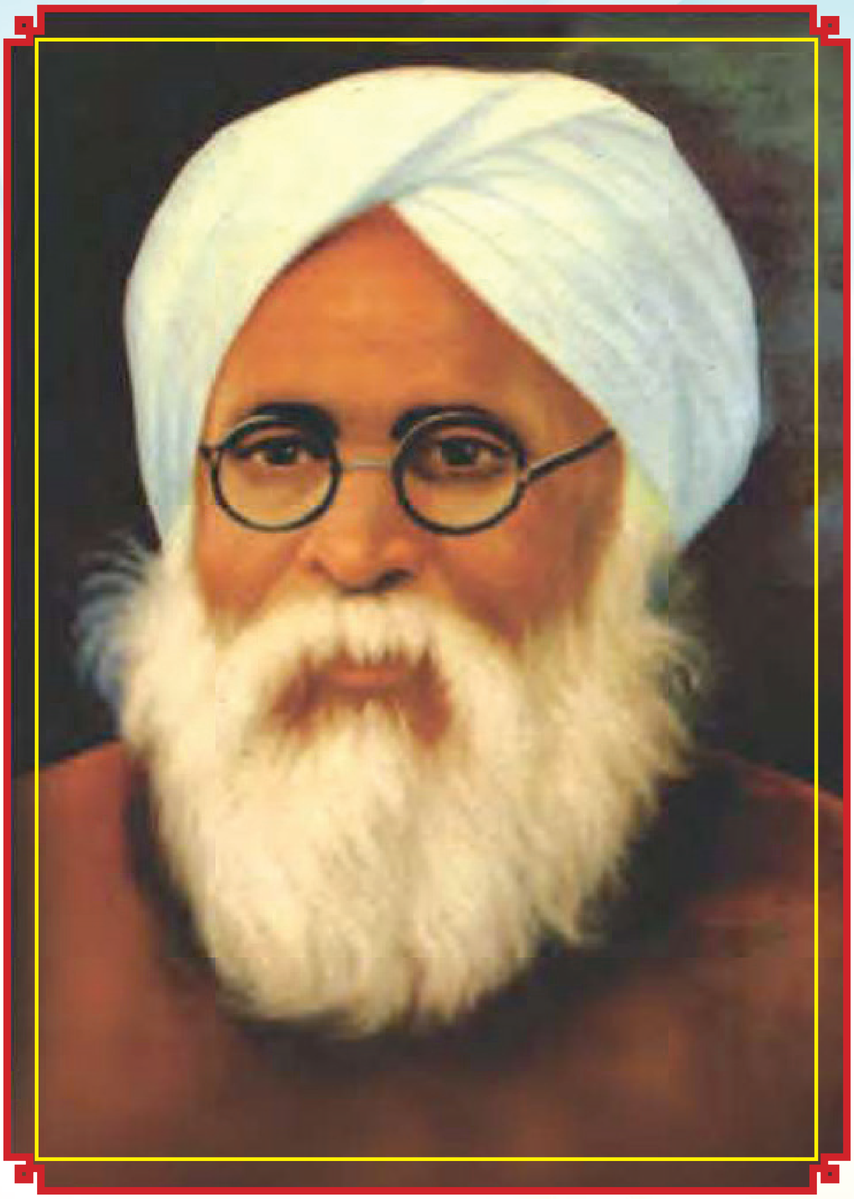

महात्मा हंसराज

(1864–1938)

प्रो. (डॉ.) रमा

प्राचार्या, हंसराज कॉलेज

हंसराज कॉलेज की वार्षिक पत्रिका 'हंस' का यह नवीन अंक आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए मुझे अत्यंत प्रसन्नता एवं गर्व का अनुभव हो रहा है। यह पत्रिका न केवल हमारे विद्यार्थियों की रचनात्मक प्रतिभा, बौद्धिक चेतना और संवेदनशील दृष्टि का दर्पण है, बल्कि यह उनके विचारों, स्वप्नों और अभिव्यक्ति की स्वतंत्र उड़ान का सशक्त मंच भी है।

हंसराज कॉलेज की रचनात्मक परंपरा का एक महत्वपूर्ण पक्ष इसकी वार्षिक पत्रिका 'हंस' भी है। यह एक बहुभाषी पत्रिका है जिसमें हिंदी, अंग्रेज़ी और संस्कृत भाषाओं की रचनाएँ प्रकाशित की जाती हैं। साहित्य की विविध विधाओं कविता, कहानी, लेख, संस्मरण आदि के माध्यम से हंसराज कॉलेज परिवार के सदस्यों की रचनात्मकता को प्रकाशित कर उनकी साहित्यिक प्रतिभा को सामने लाने की दृष्टि से यह बेहद महत्त्वपूर्ण है। आज के तीव्र परिवर्तनशील युग में शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञानार्जन तक सीमित नहीं है, बल्कि यह व्यक्तित्व निर्माण, मूल्यबोध और सामाजिक उत्तरदायित्व की चेतना विकसित करने का माध्यम भी है। 'हंस' पत्रिका में संकलित साहित्यिक रचनाएँ, कला-कृतियाँ और विचारोत्तेजक आलेख हमारे विद्यार्थियों की बहुआयामी प्रतिभा और समग्र विकास की दिशा में उनके सतत प्रयासों को प्रतिबिंबित करते हैं।

यह कॉलेज के युवा विद्यार्थियों के साथ ही रचनात्मक लेखन में रूचि रखने वाले प्राध्यापकों एवं कर्मचारियों के लिए भी एक विशेष मंच है। इसमें छात्र और प्राध्यापक दोनों की रचनात्मकता एक साथ उद्घाटित होती है। इसके माध्यम से लेखन के क्षेत्र में नए लोगों को एक बेहतरीन मंच तो मिलता ही है साथ ही निरंतर लेखन की प्रेरणा और प्रोत्साहन भी मिलता है। विद्यार्थी जीवन में कॉलेज की पत्रिका में अपनी रचनाओं के प्रकाशन से जो विशेष आनंद प्राप्त होता है उसकी अनुभूति प्रायः हम सबको है। हंसराज कॉलेज की पत्रिका में प्रकाशित होने वाले अनेक विद्यार्थी आगे चलकर साहित्य, सिनेमा, मीडिया, कला आदि क्षेत्रों में अपना विशिष्ट मुकाम हासिल करते रहे हैं। ये सभी आज अलग-अलग क्षेत्रों में जिस तरह सफलता की चोटी पर खड़े हैं उसमें हंसराज कॉलेज और 'हंस' पत्रिका में उनकी रचनात्मकता के प्रकाशन का विशेष योगदान है।

इस अंक में प्रकाशित होने वाले विद्यार्थियों, प्राध्यापकों एवं कर्मचारियों को मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ। 'हंस' के इस अंक के संपादक मंडल को भी मैं हृदय से बधाई देती हूँ जिनके परिश्रम और समर्पण से यह पत्रिका संभव हो सकी है। यह मंच आने वाली पीढ़ियों को सृजनशीलता, संवाद और सह-अस्तित्व के मूल्यों के प्रति प्रेरित करता रहेगा—ऐसी मेरी शुभकामना है।

अंत में, मैं कामना करती हूँ कि "हंस" पत्रिका निरंतर नवाचार, मौलिक चिंतन और रचनात्मक ऊर्जा की प्रतीक बनी रहे तथा हमारे विद्यार्थियों को समाज और राष्ट्र के प्रति उत्तरदायी, जागरूक और संवेदनशील नागरिक बनने की प्रेरणा देती रहे।

आप सभी को उज्ज्वल भविष्य के लिए शुभकामनाएँ।

डॉ. विजय कुमार मिश्र

संयोजक, प्रकाशन समिति

अत्यंत हर्ष के साथ हंसराज कॉलेज की वार्षिक पत्रिका ‘हंस’ का नया अंक आपके समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूँ। यह पत्रिका हमारे विद्यार्थियों की सृजनात्मक चेतना, बौद्धिक जिज्ञासा और भावनात्मक अभिव्यक्ति का जीवंत मंच है।

‘हंस’ सदैव से विचारों की उड़ान और प्रतिभा की अभिव्यक्ति का प्रतीक रही है। इस अंक में संकलित कविताएँ, कहानियाँ, आलेख, शोध-लेख, चित्रकला एवं विविध रचनात्मक प्रस्तुतियाँ विद्यार्थियों की बहुआयामी प्रतिभा और समकालीन समाज के प्रति उनकी संवेदनशील दृष्टि को उजागर करती हैं। यह विविधता ही हमारी शैक्षणिक संस्कृति की शक्ति है, जो ज्ञान, कला और मूल्यों का समन्वय प्रस्तुत करती है।

आज के डिजिटल और वैश्विक परिवेश में युवाओं की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। ऐसे समय में यह पत्रिका छात्रों को स्वतंत्र चिंतन, रचनात्मक संवाद और सामाजिक उत्तरदायित्व के प्रति जागरूक करने का एक प्रयास है। हमें विश्वास है कि यहाँ प्रकाशित विचार पाठकों को सोचने, संवाद करने और सकारात्मक परिवर्तन के लिए प्रेरित करेंगे।

इसमें प्रकशित हिंदी, अंग्रेजी एवं संस्कृत तीनों भाषाओं की रचनाएं हंसराज कॉलेज के विद्यार्थियों की भाषाई और रचनात्मक विविधता का द्योतक है। रचनाएं आमंत्रित करने से लेकर, उनके चयन, प्रूफ और संपादन आदि की दृष्टि से संपादक मंडल के सदस्यों ने जो श्रमसाध्य कार्य किया है, वह अभिनंदनीय है। ‘हंस’ का प्रकाशन हमारे संपादक मंडल के सदस्यों के साथ ही प्रशासनिक कर्मचारियों के सहयोग के बिना संभव नहीं था। उनकी मेहनत, समर्पण और उत्साह के बिना यह प्रयास संभव नहीं हो पाता। ऐसे सभी लोगों का हृदय की गहराईयों से आभार।

कॉलेज की प्राचार्या प्रो. रमा ने हमेशा की तरह इस बार भी समुचित मार्गदर्शन और प्रोत्साहन से इस अंक को अंतिम रूप देने में बड़ी भूमिका निभाई है। इसके लिए प्राचार्या महोदया का विशेष धन्यवाद।

अंत में, हम आशा करते हैं कि “हंस” आने वाले वर्षों में भी नवाचार, सृजनशीलता और अकादमिक उत्कृष्टता की प्रतीक बनी रहेगी तथा हंसराज कॉलेज की वैचारिक विरासत को नई ऊँचाइयों तक ले जाएगी।

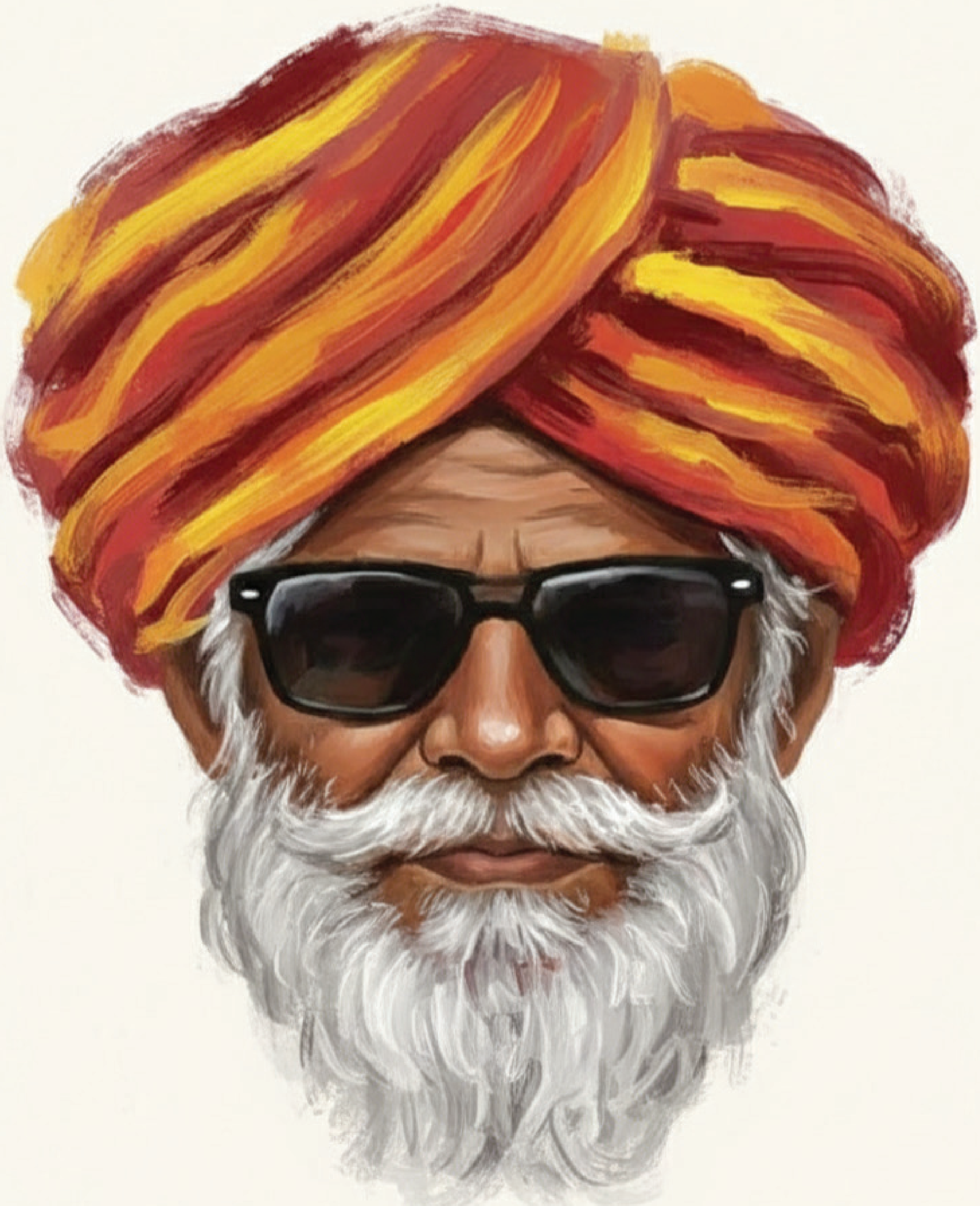

साहिल
बी.ए. (विशेष) हिंदी, प्रथम वर्ष

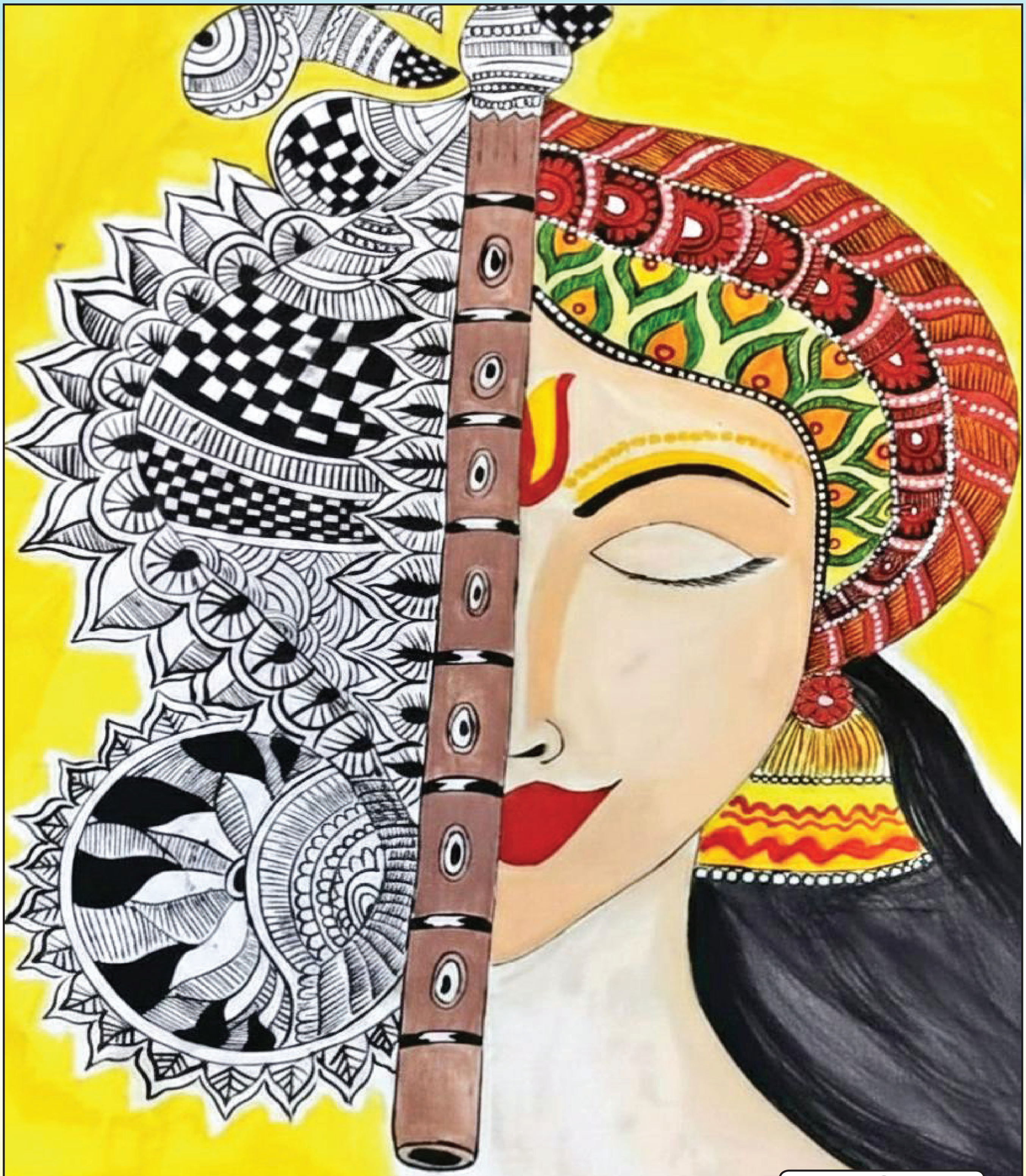

साहिल

बी.ए. (विशेष) हिंदी, प्रथम वर्ष

हिंदी खंड

संपादक-मंडल

प्रो. राजमोहिनी सागर
डॉ. असीम अग्रवाल

छात्र-संपादक

स्नेहा श्रीवास्तव
प्रतीक शर्मा

विषयानुक्रमणिका

1. हमका कोई आँख-भर निहारे / प्रतीक शर्मा --- 10
2. प्रस्थान / पीयूष मंडन --- 11
3. बारहखड़ी में बारह ही अक्षर क्यों होते हैं? / हिमांशु चंद्रवंशी --- 12
4. कलजुग / प्रेरणा पंडित --- 13
5. चंद्र को अर्घ्य / कनिष्का वत्स --- 13
6. लक्ष्य की ओर / अज़रा परवीन --- 14
7. मेरे हिस्से की / सोमिल सक्सेना जैन --- 15
8. वहम-ए-ग़ालिब / लियाक़त अली --- 15
9. किताब / प्रतीक कुमार --- 16
10. कंकाल बचेगा / हिमांशु चंद्रवंशी --- 16
11. अग्निपथ / गौरव चौहान --- 17
12. विज्ञान भवन के वे दो दिन / मणिकेश्वर यादव --- 18
13. मैं ही हूँ / उपेंद्र सिंह --- 19
14. विरह स्मरण / शांभवी त्यागी --- 19
15. बाँसुरी से बेसुरी / प्रेरणा पंडित --- 20
16. मैं भी देख लूँ उस ओर क्या है / प्रतीक शर्मा --- 21
17. ख़्वाब / प्रतीक कुमार --- 22
18. मत बताना / गौरव चौहान --- 22
19. रुको ज़रा / हृदेश कुमार यादव --- 23
20. परिंदों को जुनून चाहिए / सतेंद्र सिंह भदौरिया --- 23
21. अनिद्रा / संदेश वर्मा --- 24
22. विश्व पुस्तक मेला : शब्दों का उत्सव / अंकित कुमार --- 25
23. स्व से सब तक / उपेंद्र सिंह --- 26
24. रूख़सत-ए-यार / लियाक़त अली --- 26
25. स्वयं की खोज / श्रेया शिवहरे --- 27
26. दीवारों पर रंग उतरता / निखिल पाण्डेय श्रावण्य --- 27
27. लोक की थाती सहेजता 'चन्दन-किवाड़' / प्रतीक शर्मा --- 28

हमका कोई आँख-भर निहारे

प्रतीक शर्मा
बी. ए. (विशेष) हिंदी, द्वितीय वर्ष

सुबह अभी पूरी खुली भी नहीं थी। आँगन में रात की नमी पसरी थी, जैसे धरती ने ओस को अभी जाने की अनुमति न दी हो। दरवाज़ा धीरे से खुला। दूध की थैली भीतर आई, अख़बार मोड़कर मेज़ पर रखा गया। रसोई में पानी चढ़ा। लौ जली और उसकी हल्की-सी फुसफुसाहट घर के सोए हुए कोनों में फैल गई।

घर अभी सो रहा था। दिन चुपचाप भीतर आ चुका था।

वह आदमी हमेशा थोड़ा पहले उठता था। इतना पहले कि उसके किए हुए काम, काम नहीं लगते थे। बरामदे की धूल गायब हो जाती। तुलसी के पास मिट्टी नम दिखती। दरवाज़े की कुंडी बिना आवाज़ किए खुलती-बंद होती। जब बाकी लोग उठते, सब कुछ पहले से ठीक मिलता। जैसे घर ने खुद ही अपने को सँभाल लिया हो।

वह बोलता कम था। पर उसकी चुप्पी में खालीपन नहीं था। उसमें छोटे-छोटे उत्तर रखे रहते थे, जो ज़रूरत पर बिना शब्दों के काम आ जाएँ। कोई चीज़ टूटती, तो अगले दिन जुड़ी मिलती। कोई मन रूठता, तो शाम तक थोड़ा हल्का हो जाता। जैसे घर के भीतर कोई अदृश्य हाथ संतुलन बनाए चलता हो।

उसकी जेब हमेशा भरी रहती। चीज़ों से नहीं, तैयारी से। एक छोटा चाकू, पुरानी रसीद, सिक्का, धागे की गाँठ। कुछ भी जो अचानक काम आ जाए। देने का उसका तरीका भी अजीब था। वह चीज़ आगे बढ़ा देता, पर साथ कोई वाक्य नहीं जोड़ता। मानो देने को भी घोषणा की ज़रूरत न हो।

दोपहर तक घर अपने-अपने रास्तों में बँट जाता। कमरे खाली हो जाते। वह कभी खिड़की के पास बैठता, कभी आँगन में टूटी बाल्टी के पास कुछ ठीक करता। धूप दीवारों पर सरकती रहती। समय चलता था, पर उसके हिस्से में कोई जल्दबाज़ी नहीं होती।

शाम को लौटते हुए उसके कपड़ों पर दिन की थकान चिपकी होती। जूतों में धूल, आँखों में हल्की-सी लकीर। पर देहरी पार करते ही चेहरा सीधा हो जाता। जैसे बाहर का बोझ बाहर ही उतर गया हो। घर में आवाज़ें थीं। हँसी, फोन, टीवी की चमक, जल्दी में बोले गए वाक्य। वह सबके बीच बैठता, पर केंद्र कभी नहीं बनता। जैसे हवा, जो हर जगह है, पर दिखाई नहीं देती।

कभी-कभी कोई अधीर होकर कह देता, "आप समझ नहीं रहे..."

वह हल्का-सा सिर हिला देता। शायद समझ रहा होता था, पर समझ को शब्दों में बदलना उसे ज़रूरी नहीं लगता था।

रात को सब सो जाते तो वह देर तक जागता। पंखे की घुर्र-घुर्र, दूर से आती किसी कुत्ते की आवाज़, और दीवार पर टिकती परछाई। वह दिन को धीरे-धीरे अपने भीतर से उतारता, जैसे कोई बोझ ज़मीन पर रखकर हाथ सीधा करता है।

एक रात अचानक बिजली चली गई। घर में हलचल हुई। मोबाइलों की रोशनियाँ काँपीं। बच्चों ने आवाज़ लगाई। उसी अँधेरे में वह उठा, बिना हड़बड़ी के स्टोर तक गया, पुरानी लालटेन निकाली। बाती सीधी की। माचिस जलाई। लौ उठी।

कमरे में उजाला भर गया।

कुछ ही देर में सब सामान्य हो गया। बातें फिर चलने लगीं। किसी ने पूछा भी नहीं कि लालटेन किसने जलाई।

वह चुपचाप बैठा रहा, जैसे यह होना ही था।

लोक ऐसे लोगों के लिए बड़े शब्द नहीं गढ़ता। बस इतना कह देता है, घर इनसे टिके रहते हैं। वे सामने कम दिखते हैं, पर उनकी अनुपस्थिति सबसे पहले महसूस होती है।

एक शाम वह बरामदे में बैठा जूते झाड़ रहा था। सामने से कोई जल्दी में गुज़रा। चलते-चलते पूछा, "खाना खा लिया?" और जवाब सुने बिना आगे निकल गया। सवाल हवा में कुछ पल ठहरा, फिर बैठ गया।

उसने सिर उठाकर देखा। कोई शिकायत नहीं थी। सिर्फ़ एक शांत-सी थकान, जैसे नदी शाम तक बहकर धीमी हो गई हो।

उसकी आँखों में कुछ था। न माँग, न इंतज़ार। बस एक

अघोषित इच्छा, कि कोई एक बार ठहरकर देखे। जैसे आदमी को नहीं, उसकी उपस्थिति को देखा जाए। बिना भूमिका, बिना हिसाब, बिना उन कामों के जिन्हें गिनाया नहीं जाता।

रात और गहरी हुई। वह दरवाज़ा बंद करने उठा। लौटते हुए शीशे में अपनी परछाई पर नज़र पड़ी। एक पल ठहरा। हल्की-सी मुस्कान आई। जैसे किसी पुराने परिचित को पहचान लिया हो।

घर शांत था। दीवारें स्थिर थीं। कहीं भीतर घड़ी चल रही थी।
कुछ लोग बोलकर नहीं, टिके रहकर याद रहते हैं।
उनकी उपस्थिति शोर नहीं करती।
बस जीवन को बिखरने से रोकती रहती है।
और शायद देखने की असली शुरुआत वहीं से होती है।
जब हम किसी को उसके किए हुए कामों से नहीं,
उसकी शांत मौजूदगी से पहचानना सीख लेते हैं।

प्रस्थान

पीयूष मंडन

बी. ए. (विशेष) हिंदी, तृतीय वर्ष

मन करता है,
उड़ जाऊँ अनंत आकाश में,
जहाँ न कोई स्वर हो,
न कोई नाम,
न कोई 'मैं',
बस शून्य का मौन हो।

फिर ख़याल आता है,
ज्ञान का, विवेक का,
दुनियादारी के बंधनों का,
मोह का, सम्मान-अपमान का,
और उन अदृश्य डोरियों का,
जो मुझे बाँधती हैं,
और जिन्हें मैं ही हर दिन
और कसकर खींचता हूँ।

क्या पाया इस मोह से?
क्या पाया इस सम्मान या अपमान से?
जो हाथ पकड़ते ही
रेत की तरह फिसल जाता है?

क्या पाया उन विजेताओं ने
जिन्होंने संसार जीत लिया,
लोगों को साध लिया,
पर स्वयं को हार दिया?

और क्या खोया
उन पलायनवादियों ने
जिन्होंने स्वयं से भाग कर
खुद को ही मिटा दिया?

इसी द्वंद्व में,
इसी रिक्तता में
मन बार-बार लौटता है,
प्रस्थान की ओर,
मुक्ति की ओर,
एक ऐसी चुप्पी की ओर
जहाँ न मैं रहूँ,
और जहाँ 'मैं' से बड़ा
कुछ भी न बचे।

बारहखड़ी में बारह ही अक्षर क्यों होते हैं?

हिमांशु चंद्रवंशी
बी. ए. (विशेष) इतिहास, तृतीय वर्ष

जब मैं ढूँढ़ने बैठा, तो पाया
बारहों स्वर, बारहों रूप,
तुम्हारे प्रेम की बारह छवियाँ हैं -
हर मात्रा तुम्हारी कोई नई भंगिमा है,
हर रूप तुम्हारे किसी सौंदर्य की झलक।

क-
तुम हो -
एकदम अनगढ़, साँवली,
जैसे मिट्टी की सौंधी गंध से बनी कोई पहली छवि।

का-
'आ' के जुड़ते ही
तुम तनिक सहज हो गई हो,
जैसे किसी ने तुम्हें नाम से पुकारा हो
और तुम मुस्कुराकर सीधी तनकर खड़ी हो गई हो।

कि-
'इ' की लहर तुम्हारे केशों में उतर आई है,
जैसे बालों की लटें हवा में उड़ रही हों।

की-
अब बाल गिर आए हैं दूसरे कपोल पर भी,
पूरा मुख छवि से ढँक गया है।

कु-
'उ' तुम्हारे कान के पास ठहरी एक बाली है,
हल्की-सी हिलती हुई,
जैसे किसी प्रिय की बात कानों में पिघल रही हो।

कू -
अब दोनों कर्णफूल जगमगा उठे हैं,
तुमने सिर हिलाया और वो खनक उठे।

के-
'ए' की मात्रा तुम्हारी पिंडली बन गई है -
और तुम उसे उठाते हुए मेरे ललाट तक पहुँच गई हो।

के
'ऐ' की मात्रा अब तुमने दोनों टखनों और पिंडलियों को
ऊपर उठाकर चूम लिया हो मेरे ललाट को जैसे

को-
अब 'ओ' में तुमने कुछ कहना चाहा है,
जैसे होंठों ने पहली बार प्रेम का कोई अक्षर चखा हो,
कोई हल्की-सी फुसफुसाहट - "तुम।"

कौ -
यहाँ स्वर थोड़े व्यापक हो गए हैं,
जैसे तुमने बाँहें फैलाकर कहा हो -
"तुम मेरे हो।"

कं-
'अनुस्वार' तुम्हारे ललाट की बिंदी बनकर उभरा है,
छोटी-सी, लाल, थरथराती -
जैसे कोई मौन स्वीकार।

कः -
अब 'विसर्ग' दो मोती बनकर झड़ रहे हैं-
एक तुम्हारा आँसू - मेरे लिए,
और एक मेरा तुम्हारे लिए।
मैं समझता हूँ, प्रेम जब संपूर्ण होता है, तब विसर्जित होता है,
और यही "कः" है-
अक्षर का पूर्ण विराम, और प्रेम का समर्पण।

बारहखड़ी अब कोई व्याकरण की सूची नहीं रही,
ये तुम्हारी बारह मुद्राएँ हैं,
तुम्हारी बारह दृष्टियाँ,
और मेरे प्रेम की बारह सीढ़ियाँ।

कलजुग

प्रेरणा पंडित
बी. ए. (विशेष) हिंदी, प्रथम वर्ष

कलजुग आइस अइसन भइया,
साँच छुपा, झूठन राज।
धन के आगे धरम बिकाई,
मोल लगाई हर इक लाज।

बोली मीठ, मनवा कड़ुवा,
मुख म मुस्कान, भीतर घात।
अपने आप म उलझ गइन सब,
भूले रिश्ते, भूली बात।

मइया-बाबा बूढ़ भइन अब,
सेवा लागे भारी बोझ।
छाया छोड़ के भागत संतान,
ममता रोवे रोज-रोज।

गाँव-गिराँव सूना पड़ गइने,
सहर बन गइ सब सपना।
माटी छूटी, मोल बिकाइन,
परदेस भइ जग अपना।

नेता बोले झूठ बड़े-बड़े,
कागज लिखे धरम-नीति।
जनता सुन के ताल बजावे,
भूख मिटे न, टूटे प्रीति।

नारी आँसू पीके जीये,
मरजादे पर चोट पड़त।
बेटी जनमते डर लागे अब,
कानून किताबन म सुतत।

मंदिर-मस्जिद झगड़ा बढ़ गइ,
ईश्वर रहि गवा दूर।
इंसानन म इंसानियत अब,
होइ गइन अइसन मजबूर।

तबो कलजुग अंधियारा नाहीं,
एक दिया अबहूँ जलत।
जिहनका भीतर साँच बसत है,
ओकरा आगे झूठ ना चलत।

जब तक माटी, मेहनत, भरोसा,
जियत रही ई संसार।
कलजुग म भी राम बसत हैं,
मानस भीतर, प्रेम अपार।

चंद्र को अर्घ्य

कनिष्का वत्स
बी. कॉम. (विशेष), तृतीय वर्ष

हरा रंग जब एक तरफ,
गेरुआ हुआ जब एक तरफ,
चाँद कहाँ पर जाएगा?

छलनी का रंग सुनहरा कर
यूँ आँगन में मँडराएगा,
या देख पसीना पीर का
माथे का तेज बढ़ाएगा?

बँटवारे की पीड़ा को चख
चमक उधार क्या लाएगा?
चाहे तो वह सबको ठग ले,
तारों पे कैसे इठलाएगा?

श्वेत रंग की चादर का
क्या मातम पर काम लगाएगा?
मुँह मोड़ सकता वह नहीं,
शायद गड्ढों में अश्रु छुपाएगा।

देख विडंबना चंदा की,
कनिष्क कैसे चैन मनाएगा?
कल से शायद सूरज को छोड़
चंद्र को अर्घ्य चढ़ाएगा॥

लक्ष्य की ओर

अज़रा परवीन
बी. ए. (विशेष) हिंदी, चतुर्थ वर्ष

सावनी ने अपनी 12वीं कक्षा 95% अंकों के साथ पास की। सावनी को फैशन डिज़ाइनिंग में रुचि थी, लेकिन उसके माता-पिता चाहते थे कि वह मेडिकल करे। उसने अपने माता-पिता की बात मानकर फैशन डिज़ाइनिंग का कोर्स छोड़ दिया। कुछ दिनों बाद दोनों के कहने पर उसने मेडिकल की तैयारी भी छोड़ दी। इससे उसका एक साल बर्बाद हो गया और उसके माता-पिता उस पर फिर से मेडिकल की पढ़ाई करने के लिए लगातार दबाव बनाने लगे।

सावनी मेडिकल की तैयारी के लिए पटना से दिल्ली आ गई और एक साल तक हॉस्टल में रही। हॉस्टल का माहौल उसके अनुकूल नहीं था। कई बार हॉस्टल की दीवारें उसे जेल जैसी लगतीं। वह पढ़ाई में मन लगाने की कोशिश करती, लेकिन भीतर से टूटती जा रही थी। छोटा-सा कमरा, सीमित वातावरण और लगातार बढ़ता दबाव उसे भीतर ही भीतर खा रहा था। फिर भी वह मेहनत करती रही। NEET की परीक्षा भी पास कर ली, लेकिन उसे कोई सरकारी मेडिकल कॉलेज नहीं मिला। परिवार की आर्थिक स्थिति इतनी अच्छी नहीं थी कि प्राइवेट कॉलेज की फीस भर सकें, इसलिए उसका एक और सपना अधूरा रह गया।

अब तक सावनी के तीन ड्रॉप हो चुके थे। वह मेडिकल नहीं करना चाहती थी, लेकिन माता-पिता की इच्छा के आगे चुप थी। पिता को खुश रखने के लिए वह तैयारी करती रही, जबकि भीतर से उसका मन कहीं और था। उसने कई बार अपने माता-पिता को समझाने की कोशिश की, पर बात नहीं बनी। अंततः उसने तय किया कि वह मेडिकल नहीं, बल्कि मास कम्युनिकेशन पढ़ेगी। मगर उसने यह बात छुपाकर रखी और ऊपर से मेडिकल की तैयारी करती दिखती रही।

एक साल बाद जब परीक्षाओं की तारीख आई, तो उसने एक योजना बनाई। उसने NEET और मास कम्युनिकेशन, दोनों परीक्षाओं के फॉर्म भर दिए। NEET का परीक्षा केंद्र पटना में था और मास कम्युनिकेशन का लखनऊ में। अपने माता-पिता को उसने नकली एडमिट कार्ड दिखाया और कहा कि परीक्षा लखनऊ में है। घरवालों को लगा कि वह NEET की परीक्षा देने जा रही है, जबकि उसका असली लक्ष्य कुछ और था।

परीक्षा वाले दिन उसके पिता किसी जरूरी काम में फँस गए, इसलिए उसका भाई उसे लखनऊ छोड़ने गया। सुबह 11 बजे उसका मास कम्युनिकेशन का पेपर था। परीक्षा के बाद शाम को भाई उसे लेने आया और तभी पता चला कि वह NEET की परीक्षा देने नहीं गई थी। भाई को सच मालूम हुआ, लेकिन उसने यह बात माता-पिता से छुपा ली।

तीन महीने बाद मेडिकल का रिज़ल्ट आया, तो सावनी ने अपने माता-पिता को नकली रिज़ल्ट दिखा दिया, जिसमें उसका चयन नहीं हुआ था। घरवालों ने यही समझा कि उसने पूरी कोशिश की लेकिन सफलता नहीं मिली। कुछ दिनों बाद मास कम्युनिकेशन का रिज़ल्ट आया, जिसमें सावनी पूरे राज्य में 23वीं रैंक के साथ चयनित हुई। उसने खुशी-खुशी अपने नए सफर की शुरुआत की।

आज तीन साल बीत चुके हैं, और उसके माता-पिता अब भी यह नहीं जानते कि सावनी ने कभी मेडिकल की तैयारी सच में की ही नहीं थी। सावनी ने अपने सपनों को चुना और अपने लक्ष्य की ओर बढ़ गई। यह कहानी उन युवाओं की है जो अपने सपनों को पूरा करने के लिए किसी भी हद तक जाने का साहस रखते हैं, लेकिन साथ ही यह भी सिखाती है कि सपनों और परिवार के बीच संवाद होना कितना आवश्यक है।

मेरे हिस्से की

सोमिल सक्सेना जैन

बी.एस.सी. (विशेष) गणित, द्वितीय वर्ष

परसों खिड़की से बाहर देखा
तो बारिश दब के बरसी थी,
और उसका पानी पत्थर की दीवार से होकर जब गुज़रा,
एक कलाकृति-सी पत्थर में उसे बनाते देखा था।
यह देखा तो चाहत हुई कि काश
वो पानी मेरी नियति होता,
काश वो पत्थर मेरा होता
और दीवार मेरे हिस्से की।

लेकिन कल शाम को
जब आसमान में नीले-कत्थई रंगों ने डेरा डाला,
उस शाम की छाँव के नीचे
मैंने चिड़िया को तिनका-तिनका जोड़
घर बनाते देखा था।
काश वो तिनके मेरी बुनाई होते,
होती काश वो नीड़ मेरे हिस्से की।

आज जब देखा तो सूरज निकल आया,
शायद बादलों से थक कर
अधखुले पंख पट दिए।
किरणों का काफिला उठा कर
जब फूल खिले,
तो तितलियों को मिला रास्ता नया।
जिनमें मँडराते थे ये फूल नए,
काश वो किरणें मेरी होतीं,
होती वो मंज़िल मेरे हिस्से की।
हर रोज़ जब मौसम ने
एक नया पन्ना खोला,
मौका मिला एक नई किताब लिखने का।
बहुत दिन हुए कोई नज़्म लिखे,
तो सोचा आज इस कमरे से बाहर निकल के
चाँद पर लिखकर कर लूँ अपनी
वो किताब मेरे हिस्से की।

वहम-ए-ग़ालिब

लियाक़त अली

बी. ए. (विशेष) दर्शनशास्त्र, द्वितीय वर्ष

क्यों जाएँ ऐसी जगह पे
हो जहाँ कोई नहीं,
हैं लाख यहीं आशियां
पर हमज़बाँ कोई नहीं।

है सीरत ही बन गई
दर-ओ-दीवार सी अगर,
दूर क्यों ही जाइए
जब राज़दाँ कोई नहीं।

हो गर ताक़त-ए-परवाज़
सीने में मगर,
क्या ही कीजे आप
जब हो क़द्रदाँ कोई नहीं।

है वहम में ग़ालिब
कि पूछ रहे हैं हाल सब,
मर भी जाए आदमी
हो परेशां कोई नहीं।

किताब

प्रतीक कुमार
बीएससी (विशेष) गणित

किताब-ए-हयात के कुछ पन्नों में
बहुत से पन्ने पलटना बाकी है।
न जाने इनमें कौन-कौन से ऐब छिपे है,
कुछ अधूरे टुकड़े कागज़ों के
देखना बाकी है।
न जाने इनमें कौन-कौन से राज़ छिपे हैं।

कुछ आधे-अधूरे पन्नों के लिए
ज़रा-सी स्याही बाकी है,
शायद इनमें कुछ ख़्वाब छिपे हैं।
कुछ हाथ की लिखावटों को
देखना बाकी है,
शायद इनमें कुछ रंग छिपे हैं।

कुछ पन्नों में
शायद कुछ अनकहे लफ़्ज़ छिपे हैं,
कुछ पन्नों में
शायद कुछ अनजाने दाग छिपे हैं।
कुछ यादें लाजवाब बाकी हैं,
कुछ पन्नों में शायद
कुछ जवाब बाकी हैं।

न जाने इस किताब में
और कौन से सवाल छिपे हैं।
शायद कुछ किस्से बेमिसाल छिपे हैं।
कुछ ख़्वाब छिपे हैं,
कुछ ऐब छिपे हैं,
कुछ जवाब छिपे हैं।
न जाने इस किताब में
और कौन-कौन से सवाल छिपे हैं।

कंकाल बचेगा

हिमांशु चंद्रवंशी
बी. ए. (विशेष) इतिहास, तृतीय वर्ष

एक दिन शहर नहीं बचेगा,
महज़ धुंध बचेगी।
एक दिन पेड़ नहीं बचेंगे,
महज़ सूखी लकड़ियाँ बचेंगी।

एक दिन हवा नहीं बचेगी,
महज़ हवा में घुला ज़हर बचेगा।
एक दिन नदी नहीं बचेगी,
महज़ नाला बचेगा।

एक दिन पहाड़ नहीं बचेंगे,
महज़ कचरे के ढेर बचेंगे।
एक दिन सड़कें नहीं बचेंगी,
महज़ गड्ढे बचेंगे।

एक दिन अन्न नहीं बचेगा,
महज़ भूख बचेगी।
एक दिन घर नहीं बचेंगे,
महज़ दीवारों की दरारें बचेंगी।

एक दिन भाषा नहीं बचेगी,
महज़ कुछ मूक बचेंगे।

एक दिन हम नहीं बचेंगे,
हमारी भावनाएँ नहीं बचेंगी,
हमारी संवेदनशीलता नहीं बचेगी,
हमारे विचार नहीं बचेंगे।

महज़ केवल
हममें हमारा मनुष्यता-विहीन
कंकाल बचेगा।

अग्निपथ

गौरव चौहान
बी. ए. (विशेष) हिंदी, प्रथम वर्ष

चाहे कितनी मुसीबतें आएँ,
चाहे कितने पहाड़ टूटें।
चट्टानों की छाती फटे,
सिंह की दहाड़ टूटे।

चल रहा हूँ, जल रहा हूँ,
मैं इस राह का पंथी हूँ।
मन करे उस राह हो लेता,
मैं कब किसका बंदी हूँ।

मुझे न हार का डर है,
न मुझे कभी जीत ही प्यारी।
फैलाना चाहता हूँ हर तरफ
मानवता की रीत प्यारी।

संघर्षों की सुनामी में
मुझको गोते लगाने दो।
मैं तुमसे कह रहा हूँ,
जाता हूँ तो डूब जाने दो।

अभ्यासों से सीखूँगा,
बिगड़ता रहूँगा, सँभलता रहूँगा।
मैं इस अग्निपथ पर यूँ ही
चलता रहूँगा, चलता रहूँगा॥

मेरे सर पर आँच आए,
पाँव तले काँच आए।
फिर भी मैं रुकूँगा नहीं,
फिर भी मैं झुकूँगा नहीं।

मरुस्थल में भी चलूँ तो
क्षण न लगती भूख-प्यास।
हार-जीत के परे हूँ,
स्वयं को रहा तराश।

अंगारे अब शब्द बने,
आँधियाँ बनीं श्वास।
हौसलों से धरती नापनी है,
खंगाल मारना है आकाश।

अजर-अमर प्रकाश बनने हेतु
इस भट्ठी में जलता रहूँगा।
मैं इस अग्निपथ पर यूँ ही
चलता रहूँगा, चलता रहूँगा॥

बनना चाहूँ समुद्र-सा,
ऊपर से चंचल, अंदर से शांत।
अरबी, कोरल, चीन नहीं,
मेरा कहना है प्रशांत।

अपनी फौलादी लहरों से
सब उथल-पुथल कर दूँगा मैं।
मृत्यु-मोक्ष से सजा के रण को,
कण-कण में महासमर भर दूँगा मैं।

चिंतन से अब हार जीत को,
लड़ना है तो लड़ना है।
ऊँचाइयों का न खाइयों का
अब ख़ौफ़ कहीं
ऊँचे शिखरों पर चढ़ना है।

अब कुछ कर गुजरना है,
कब तक हाथ मलता रहूँगा?
मैं इस अग्निपथ पर यूँ ही
चलता रहूँगा, चलता रहूँगा।

विज्ञान भवन के वे दो दिन

मणिकेश्वर यादव
बी. ए. (विशेष) हिंदी, द्वितीय वर्ष

कुछ अनुभव ऐसे होते हैं जो कार्यक्रम बनकर शुरू होते हैं और स्मृति बनकर लौटते हैं। जनवरी की हल्की ठंड में जब मैं विज्ञान भवन की ओर बढ़ रहा था, तब मन में बस यही था कि एक राष्ट्रीय समागम में शामिल होना है, पर भीतर ही भीतर यह एहसास भी था कि ये दो दिन कुछ नया देकर लौटने वाले हैं। हॉल के बाहर छात्रों की चहल-पहल, परिचित और अपरिचित चेहरों की मुस्कान, और भीतर चलती तैयारियाँ, सब मिलकर वातावरण को जीवंत बना रही थीं।

पहले दिन की शुरुआत औपचारिक अवश्य थी, पर वातावरण में कोई कठोरता नहीं थी। मंच पर वक्ता थे, पर सामने बैठे युवाओं की आँखों में जो उत्सुकता और चमक थी, वही असली केंद्र लग रही थी। "आत्मनिर्भर भारत" और "नवाचार" जैसे विषय सुनने में बड़े लगते हैं, लेकिन जब वक्ताओं ने अपने अनुभवों के छोटे-छोटे किस्से साझा किए, तो बातें अचानक सहज और अपनी-सी लगने लगीं। बीच-बीच में तालियाँ, दोस्तों की धीमी फुसफुसाहटें और नोट्स बनाते हाथ, ये सब मिलकर उस दिन को केवल एक सत्र नहीं, बल्कि एक साझा संवाद बना रहे थे।

दूसरे दिन तक आते-आते सभी के बीच एक अनौपचारिक अपनापन बन चुका था। वही चेहरे अब परिचित लगने लगे थे। विशेष सत्रों में जब युवाओं की भूमिका, महिला सशक्तीकरण और 2047 के भारत की चर्चा हुई, तो ऐसा लगा कि ये केवल नीतियों की बातें नहीं हैं, बल्कि हम सबके निजी सपनों से जुड़ा संवाद है। कई क्षण ऐसे आए जब वक्ता मंच से बोल रहे थे, पर सवाल और जवाब हमारे भीतर चल रहे थे।

मुझे सबसे अधिक याद रह गए वे छोटे-छोटे विराम। चाय की भाप के साथ चलती बातचीत, गलियारों में गूंजती हँसी, किसी अनजान व्यक्ति का अचानक दोस्त बन जाना, यही तो किसी समागम की असली गर्माहट होती है। खाना, व्यवस्था और मेहमाननवाज़ी सब सुव्यवस्थित थे, पर असली सुंदरता यह थी कि हर कोई सहज महसूस कर रहा था। आयोजन औपचारिक कम और मानवीय अधिक लग रहा था।

समापन के समय जब राष्ट्रगान बजा, तो एक पल के लिए सब कुछ शांत हो गया। दो दिन पहले जो जगह अनजान थी, अब कुछ अपनी-सी लगने लगी थी। बाहर निकलते हुए ऐसा महसूस हुआ कि हमने केवल सत्र अटेंड नहीं किए, बल्कि हम एक साझा ऊर्जा का हिस्सा बनकर लौटे हैं। आज पीछे मुड़कर देखता हूँ, तो विज्ञान भवन की याद किसी रिपोर्ट की तरह नहीं आती। वह उन चेहरों, आवाज़ों, तालियों और हल्की-सी थकान में छिपी संतुष्टि के रूप में लौटती है। शायद यही किसी अच्छे अनुभव की पहचान है, वह खत्म होने के बाद भी भीतर चलता रहता है।

> **आँसू के खारे पानी में डुबाये बिना सौन्दर्य के चित्र-रंग पक्के नहीं हो सकते, पर प्रकृति के पास सौन्दर्य है, आँसू नहीं।**
>
> **~महादेवी वर्मा**

मैं ही हूँ

उपेंद्र सिंह
बीएससी (विशेष) रसायन विज्ञान, प्रथम वर्ष

मैं धरती का धैर्य हूँ, अर्जुन,
और आकाश की ऊँची उड़ान।
जल की ठंडी शांति भी मैं,
मैं ही अग्नि का जलता हुआ अभिमान।

हवा बनकर रणभूमि में
जो योद्धाओं के तन को छू जाती है,
सुनो पार्थ, वह भी मैं ही हूँ
जो वीरों के हृदय में जोश जगाती है।

तुम्हारे मन की हिम्मत मैं,
तुम्हारी सोच की तलवार मैं।
तुम जो स्वयं को समझते हो,
उस 'स्व' की असली पहचान भी मैं।

मैं शुरुआत का पहला कदम,
अंत की अंतिम साँस हूँ।
जग मुझसे जन्मे, मुझमें समाए,
मैं ही जीवन, मैं ही नाश हूँ।

धरती की सुगंध मैं ही,
सूरज की जलती लौ भी मैं।
चाँद की शीतल चाँदनी,
वीर हृदय की धड़कन भी मैं।

शक्ति का स्रोत मैं ही हूँ,
ज्ञान का दीपक मैं हूँ।
जो निहत्था रण में टिक जाए,
उसकी रीढ़ का बल मैं ही हूँ।

धनंजय, मुझसे ऊपर कुछ नहीं,
न लोक, न काल, न कोई वार।
सारी सृष्टि टिकी है मुझ पर,
जैसे मोतियों का एक ही हार।

विरह स्मरण

शांभवी त्यागी
बी. ए. (प्रोग्राम), द्वितीय वर्ष

अँधेरों में, या...

मुझमें सहमी इन खामोशियों में,
मेरे उदास चेहरों में,
या मेरे अधूरे से वाक्यों में,
उन सब में जहाँ मेरी स्थिरता मुझसे ज्यादा
बोलती नज़र आती है।
सब में तुम हो
तुम्हारी बातें हैं
वो हँसी है,
जो मेरी खामोशी में खिल जाती है।

न शिकायत, न उलझन
बस तुममें ठहर जाने की चाहत
मुझे तुम्हारी याद दिलाती है,
ये कलम की जादूगरी भी
उन लम्हों को याद करके ही आ पाती है

कभी सोच, कभी संकोच
ये कशमकश, यूँ ही चलती चली जाती है
आज,
कल,
या....
कहूँ चलो फिर कभी
मुलाकात की ये चाहत बस मन में रह जाती है

वो दिन,
एक दिन,
आएगा...

ये कहते कहते ये आँखें भी ठहरती चली जाती हैं...

बाँसुरी से बेसुरी!

प्रेरणा पंडित
बी. ए. (विशेष) हिंदी, प्रथम वर्ष

ज़िंदगी जो बाँसुरी थी,
बेसुरी-सी हो गई।
कल तलक जो पूर्ण थी,
फिर अधूरी हो गई।

क्या पता क्या हो रहा है,
कौन जागा, कौन सो रहा है!
कौन क्या काटता है,
कौन क्या-क्या बो रहा है!
किसको किससे क्या मिला,
कौन किसको खो रहा है!
कोई भी नहीं जानता
कब, कहाँ, क्या हो रहा है!
इच्छाओं के पीछे भागे,
किरकिरी-सी हो गई।
ज़िंदगी जो बाँसुरी थी,
बेसुरी-सी हो गई।

सबकी चाल-ढाल जैसे
शतरंजी बिसात-सी।
दिन की रोशनी भी यहाँ
लगे काली रात-सी।
धड़कनों का क्या भरोसा,
सिरफिरी-सी हो गई।
ज़िंदगी जो बाँसुरी थी,
बेसुरी-सी हो गई।

फर्क कितना भूल बैठे
हम मकर और मीन में।
साँप विषैले पल रहे हैं
अपनी ही आस्तीन में।
हमने रक्तबीज बोए
मन की इस ज़मीन में।
सिर्फ व्यभिचार घोला
उम्र के हर सीन में।
इस कदर इंसानियत ये
आसुरी-सी हो गई।
ज़िंदगी जो बाँसुरी थी,
बेसुरी-सी हो गई।

वो जिएँ, मरें भले ही,
बस मुझको मुनाफ़ा हो।
ज़मीर बेचकर भी मेरे
अर्थ का इज़ाफ़ा हो।
मैं ही मैं करती रही मैं,
ये अहम की हार है।
इसलिए वक़्त की भी मार है,
फटकार है।
आदमी की बेबसी अब
हिमगिरि-सी हो गई।
ज़िंदगी जो बाँसुरी थी,
बेसुरी-सी हो गई।

जहाँ कहीं अपने आपको उत्सर्ग करने की, अपने आपको खपा देने की भावना प्रधान है, वहीं नारी है। जहाँ कहीं दु:ख-सुख की लाख-लाख धाराओं में अपने को दलित द्राक्षा के समान निचोड़ कर दूसरे को तृप्त करने की भावना प्रबल है, वहीं 'नारीतत्त्व' है या शास्त्रीय भाषा में कहना हो, तो 'शक्तित्त्व' है। नारी निषेध-रूपा है। वह आनंद भोग के लिए नहीं आती, आनंद लुटाने के लिए आती है।

~हजारीप्रसाद द्विवेदी

मैं भी देख लूँ उस ओर क्या है!

प्रतीक शर्मा
बी. ए. (विशेष) हिंदी, द्वितीय वर्ष

इसरो का चमत्कार क्या है?

मेरे लिए इसका उत्तर किसी रॉकेट की उड़ान में नहीं, बल्कि उन अनपेक्षित क्षणों में छिपा है, जब विज्ञान के बीच अचानक कविता साँस लेने लगती है। जब एक साहित्यिक विद्यार्थी, तकनीक के विशाल संसार में, अपने-से शब्दों की प्रतिध्वनि सुन लेता है।

रात्रि का समय था जब मैंने पहली बार इसरो परिसर में प्रवेश किया। चारों ओर गहरी शांति थी, पर उस शांति में भी एक अदृश्य ऊर्जा स्पंदित हो रही थी। जैसे ही मैं भीतर बढ़ा, सामने 'दिनकर' दिखाई दिए। दिनकर अर्थात सूर्य। लगा मानो अंधकार के बीच प्रकाश स्वयं स्वागत के लिए खड़ा हो। वह क्षण मेरे लिए एक संकेत था कि इस स्थान पर ज्ञान का हर रूप, हर स्वरूप सम्मान पाता है।

अगली सुबह जब मैं थोड़ा और भीतर कैंपस में पहुँचा, तो एक और अप्रत्याशित अनुभव मेरी प्रतीक्षा कर रहा था। वहाँ भारतेंदु के दर्शन हुए, हिंदी के उस चंद्रमा के, जिसने आधुनिक साहित्य को नई दिशा दी। रात में दिनकर और सुबह भारतेंदु। उसी पल लगा कि यही इसरो का असली चमत्कार है, जहाँ असंभव भी सहज होकर संभव हो जाता है। विज्ञान के इस विराट परिसर में हिंदी साहित्य के ये चित्र केवल सजावट भर नहीं थे, मानो कह रहे हों कि प्रगति की भाषा सीमाओं में बँधी नहीं होती।

पूरा इसरो कैंपस हिंदी कवियों के चित्रों से सजा हुआ था। दीवारें मानो शब्दों में बोल रही थीं। कहीं कविता की स्मृति थी, कहीं विचार की गंभीरता। साहित्य का एक विद्यार्थी होने के नाते मेरे लिए यह अनुभव अप्रत्याशित और अत्यंत आत्मीय था। जहाँ मैंने कल्पना की थी कि केवल गणनाएँ और तकनीकी चर्चाएँ होंगी, वहाँ संवेदना और भाषा की ऐसी उपस्थिति देखकर मन भीतर तक छू गया।

सबसे अधिक प्रभावित करने वाला दृश्य तब था, जब विभिन्न राज्यों से आए वैज्ञानिकों से संवाद हुआ। कोई केरल से था, कोई तमिलनाडु से, कोई देश के दूसरे छोर से। हिंदी उनकी सहज भाषा नहीं थी, फिर भी वे टूटी-फूटी हिंदी में बात करने का प्रयास कर रहे थे। उन शब्दों में शुद्धता भले न रही हो, पर आत्मीयता पूरी थी। उस क्षण लगा कि विज्ञान मनुष्य को अंतरिक्ष तक ले जाता है, और भाषा मनुष्य को मनुष्य से जोड़ती है।

मैं वहाँ एकमात्र साहित्य के विद्यार्थी के रूप में उपस्थित था, पर उस अनुभव ने मुझे कभी अकेला महसूस नहीं होने दिया। धीरे-धीरे यह अनुभूति गहरी होती गई कि साहित्य और विज्ञान दो अलग रास्ते नहीं हैं। वे एक ही यात्रा के दो आयाम हैं। एक बाहरी ब्रह्मांड की खोज करता है, दूसरा भीतर के आकाश की।

इसरो की वह यात्रा मेरे लिए केवल एक तकनीकी सम्मेलन का हिस्सा भर नहीं रही। वह विश्वास का अनुभव बन गई। यह विश्वास कि ज्ञान की दुनिया में किसी एक भाषा, किसी एक विधा, या किसी एक सोच की सीमा नहीं होती। आज भी जब उस परिसर को याद करता हूँ, तो वही दृश्य स्मृति में उतर आता है। रात का दिनकर, सुबह का भारतेंदु, और उनके बीच चलता हुआ मेरा एक छोटा-सा साहित्यिक सफर।

ख़्वाब

प्रतीक कुमार

बी. एससी. (विशेष) गणित

ये कागज़ की कश्ती-से लम्हे
दरिया-ए-हयात में बहते जा रहे हैं।
एक वो हैं जो ग़म देते जा रहे हैं,
एक हम हैं जो सहते जा रहे हैं।

ये जो दिन गुज़रे हैं उनके इंतज़ार में,
इस इंतज़ार का ज़र्रा-ज़र्रा मुझसे कुछ कहता है।
वो नहीं, उनका ख़याल सही,
उनकी यादें सही, उनका मलाल सही,
उनका कुछ तो है
जो मेरे पास रहता है।

मेरी इन ज़ख़्मी रातों का मरहम
उन्होंने अपनी आँखों में छुपा रखा है।
इक आख़िरी उम्मीद का टुकड़ा बचा रखा है,
इस उम्मीद को तार-तार तोड़ना रहता है।

इस सुकून-ए-दिल-ए-तन्हाई से,
इस आरज़ू-ए-बेताब जिगर से,
इस अज़ाब-ए-बेताल्लुकी से,
इस क़ैद-ए-मोहब्बत से
अब रिहाई की इक आस है।
उनकी एक निशानी
आज भी मेरे दिल के पास है।

अब इस मुसलसल कश्मकश से,
इस रंज से, इस रम्ज़ से
मुझे रिहाई चाहिए।
वो नहीं, उनकी याद सही,
अब मुझे बस तन्हाई चाहिए।
वो नहीं, उनका ख़्वाब सही,
उनका दर्द सही, उनका अज़ाब सही,
उनका कुछ तो है
जो मेरे पास रहता है।
मेरे इस तन्हा दिल में
आज भी उनका ख़्वाब रहता है,
उनका ख़्वाब रहता है।

मत बताना

गौरव चौहान

बी. ए. (विशेष) हिंदी, प्रथम वर्ष

मत बताना,
कि मैं तुम्हें अच्छा लगता हूँ।

मत बताना,
कि तुमने क्या ख़्वाब सजा रखे हैं।

मत बताना,
तुम्हारा पसंदीदा रंग और पुष्प कौन-सा है।

मत बताना,
तुम्हें कौन-सा इत्र अच्छा लगता है।

मत बताना,
तुम्हें साड़ी ज़्यादा पसंद है या जींस।

मत बताना,
वो कौन-सा गाना है
जिसे तुम अक्सर गुनगुनाती हो।

मत बताना,
तुम खाली समय में पुस्तकें पढ़ती हो
या चित्र बनाती हो।

मत बताना,
तुम चाय की शौक़ीन हो
या फिर कॉफी की।

और ये भी मत बताना
कि तुम प्यारी बातों के अलावा
और क्या-क्या कर लेती हो,

क्योंकि ये सब
मैं खुद से जानना चाहता हूँ।

रुको ज़रा

हृदेश कुमार यादव
बी. ए. (प्रोग्राम), द्वितीय वर्ष

रुको ज़रा,
इस भाग-दौड़ की ज़िंदगी में
दो मिनट के लिए सोचो ज़रा,
जिसने तुम्हें जन्म दिया,
उनके लिए तुमने क्या किया?

रुको ज़रा,
इस भाग-दौड़ की ज़िंदगी में
दो मिनट के लिए सोचो ज़रा,
जो रोटी आज तुमने खाई है,
वह कहाँ से और कैसे आई है?
उस अन्नदाता के लिए
तुमने क्या कदम उठाए हैं?

रुको ज़रा,
इस भाग-दौड़ की ज़िंदगी में
दो मिनट के लिए सोचो ज़रा,
इस प्रकृति ने जो तुम्हें सब कुछ दिया,
उसके लिए तुमने क्या किया?

रुको ज़रा,
इस भाग-दौड़ की ज़िंदगी में
दो मिनट के लिए सोचो ज़रा,
कल उस जवान ने
तुम्हारे लिए अपना प्राण दे दिया,
तुमने उसके और उसके परिवार के लिए
क्या किया?

रुको ज़रा,
इस भाग-दौड़ की ज़िंदगी में
दो मिनट के लिए सोचो ज़रा।

परिंदों को जुनून चाहिए

सतेंद्र सिंह भदौरिया
बी. ए. (विशेष) दर्शनशास्त्र, प्रथम वर्ष

परिंदों को जुनून चाहिए
शिखर तक पहुँचने के लिए,
अपने दिल में लगी
चिंगारी को आग बनाने के लिए।

हर हाल में उड़कर
अपने आसमानों को पाने के लिए,
असीम आकाश में
तूफ़ान की भाँति लहराने के लिए।

मंज़िल की राह में आई ठोकरों से
निडर होकर टकराने के लिए,
खून से लथपथ तन में भी
आत्मनिर्भरता जगाने के लिए।

टूटे सपनों के अंशों को
पुनः सजाने के लिए,
परिंदों को हिम्मत चाहिए
टूटी हुई हिम्मत को जताने के लिए।

अनगिनत असफलताओं के बाद भी
खुद को जोश के साथ संभालने के लिए,
लाख बार गिरने के बाद भी
उमंग से फिर उड़ने की कोशिश करने के लिए।

आगे बढ़कर
अपनी तमन्नाओं को सच करने के लिए,
अपने भीतर के भय को
सदैव के लिए भगाने के लिए।

परिंदों को हिम्मत और जुनून चाहिए,
अपने लक्ष्य को
हर हाल में पाने के लिए।

अनिद्रा

संदेश वर्मा

बी. एससी. (विशेष) इलेक्ट्रॉनिक्स, प्रथम वर्ष

संघर्ष से भरी दिनचर्या,
चंद पल की राहत है।
आँखों में मेरे नींद है,
सोने की मेरी चाहत है।

बेसब्र हूँ उस लम्हे के लिए,
सपनों की दुनिया में खो जाऊँ मैं।
मेरी आँखें अपने आप बंद हो जाएँ,
और चैन से सो जाऊँ मैं।

किंतु यह जो नींद है,
आती है पर समाती नहीं।
यह जो मन है, बहुत विचित्र है,
और विचलित भी।

वर्तमान, भूत, भविष्य
आँखों के सामने झलकते हैं।
सारी रोजमर्रा की ज़िंदगी
साफ़-साफ़ नज़र आने लगती है।

मन सो नहीं रहा,
सिर्फ सोच रहा है।
गुम है कहीं,
बीते पलों के दर्पण में
खुद को ढकेल रहा है।
यादों को वापस याद करके
न जाने क्यों झेल रहा है।

शायद जगत को समझने निकला है,
नहीं समझा।
यह एक रात की बात नहीं,
शायद अतीत को बदलने निकला है।

भूल गया है,
सोचने से वास्तविकता नहीं बदलती।
शायद भविष्य की कल्पना कर रहा है,
नहीं जानता, कर्म से भविष्य है,
कल्पना से नहीं।

शायद अपने चरित्र का निरीक्षण कर रहा है,
जैसे कल खुद का चरित्र-चित्रण लिखना हो।

इन्हीं “शायद” की गलियों में
मन डोल रहा है।
कभी इधर, तो कभी उधर टटोल रहा है।
कभी स्मरण को दोहराता,
तो कभी विचारों को।
कभी दिल की भावना व्यक्त करता,
तो कभी नाराज़गी।

कभी अलीन है, कभी मग्न,
कभी निराश तो कभी प्रसन्न।
कभी गीत गाता है,
तो कभी गुनगुनाता है।
कभी भूगोल सोचता है,
तो कभी इतिहास।
अपनी रचनात्मकता के स्पर्श से
कभी-कभी खुद को जीवित एहसास करता है।

अभी यहाँ, तो कभी वहाँ,
मंडराते, भटकते,
अपने मनन की कश्ती पर सवार
मन एक यात्रा पर निकला।

और एक द्वीप पर पहुँचा,
एक द्वीप - विशाल और घना,
सुंदर और शांत,
और मनगढ़ंत।

इस सोच के सागर में
कहीं बह जाने दो मन को।
इस द्वीप पर ही रह जाने दो।
मत सोचो यह गलत है,
मत समझो यह लापरवाही है।

इस घने जंगल में
कहीं खोने दो मन को।
इस द्वीप पर खयाली बीज बोने दो।
अब जो हो रहा है,
उसे होने दो।

मुझे नींद आ रही है,
मुझे सोने दो।

विश्व पुस्तक मेला : शब्दों का उत्सव

अंकित कुमार
बी. ए. (विशेष) हिंदी, द्वितीय वर्ष

"ना कोई शिकायत,
ना कोई शर्त,
ना कोई मलाल,
किताबें ही पूछती हैं
हर पन्ने पर हमारा हाल।"

किताबें सचमुच अद्भुत मित्र होती हैं। न कभी नाराज़ होती हैं, न 'सीन' करके छोड़ती हैं, न देर से जवाब देने का उलाहना देती हैं। बस चुपचाप साथ बैठती हैं और हर बार कुछ नया सिखा जाती हैं। मनुष्य का सबसे सच्चा मित्र यदि कोई है, तो वह पुस्तक ही है। वह न केवल ज्ञान देती है, बल्कि हमारी कल्पनाशीलता और सोचने की शक्ति को भी विस्तृत करती है।

इसी प्रेम और उद्देश्य को साकार करने के लिए वर्ष 1972 से राष्ट्रीय पुस्तक न्यास द्वारा आयोजित विश्व पुस्तक मेले का 53वाँ संस्करण वर्ष 2026 में दिल्ली के भारत मंडपम, प्रगति मैदान में आयोजित किया गया। इस वर्ष हमें विशेष उत्साह इसलिए भी था क्योंकि हम हिंदी साहित्य परिषद् के साथ एक शैक्षिक भ्रमण पर वहाँ गए थे। कहना न होगा कि यह केवल 'ट्रिप' नहीं, बल्कि साहित्यिक तीर्थयात्रा बन गई।

10 से 18 जनवरी 2026 तक चला यह मेला निःशुल्क प्रवेश के साथ आम पाठकों के लिए अत्यंत सुलभ रहा। इस वर्ष की विशेष थीम थी "भारतीय सैन्य इतिहास : शौर्य और विवेक @ 75", जो भारत की आज़ादी के अमृत काल और सेना के गौरवशाली इतिहास को समर्पित थी। इस थीम को देखकर दिनकर जी की पंक्तियाँ सहज ही स्मरण हो उठीं :

"कलम आज उनकी जय बोल,
जला अस्थियाँ बारी-बारी,
चिटिकाई जिनमें चिंगारी,
जो चढ़ गए पुण्य वेदी पर लिए बिना गर्दन की मोल।"
रामधारी सिंह दिनकर

मेले में कतर 'गेस्ट ऑफ ऑनर' और स्पेन 'फीचर्ड कंट्री' के रूप में शामिल थे। संस्कृतियों का यह संगम देखने योग्य था। बाल मंडप में बच्चों की चहल-पहल, लेखक मंच पर चर्चाएँ, और डिजिटल लाइब्रेरी जैसे राष्ट्रीय ई-पुस्तकालय के स्टॉल आधुनिकता और परंपरा के सुंदर संतुलन का परिचय दे रहे थे।

अब ज़रा हमारी टोली की बात भी हो जाए। हिंदी साहित्य परिषद् के सदस्य पुस्तक मेले में दो श्रेणियों में बँट गए थे। एक वे, जो सचमुच किताबें खोज रहे थे; और दूसरे वे, जो किताबों के साथ 'सेल्फी' खोज रहे थे। कुछ मित्र ऐसे भी थे, जिनकी थैली हर घंटे भारी होती जा रही थी और जेब हल्की। कई बार ऐसा लगा मानो हम मेले में नहीं, पुस्तक-प्रेम की परीक्षा में आए हों। "बस आख़िरी किताब" कहकर कम-से-कम पाँच बार आख़िरी किताब खरीदी गई।

फिर भी, इस हल्की-फुल्की भागदौड़ के बीच एक बात स्पष्ट थी कि सोशल मीडिया के इस युग में भी किताबों का आकर्षण कम नहीं हुआ है। वहाँ उमड़ी भीड़ इस बात का प्रमाण थी कि कागज़ की खुशबू और पन्नों की सरसराहट आज भी लोगों के मन को छूती है।

किताबों के प्रति इस प्रेम को इन पंक्तियों में व्यक्त किया जा सकता है :

"हर सफ़ा एक नया चेहरा दिखाता है मुझे,
गुज़रा हुआ जमाना याद दिलाता है मुझे,
यह कागज़ के फूल नहीं, महकते हुए जज़्बात हैं,
जो सदियों का फैसला पल भर में मिटा देते हैं।"

सच कहा जाए तो हिंदी साहित्य परिषद के साथ यह यात्रा न केवल पुस्तकों से, बल्कि एक-दूसरे से भी जुड़ने का अवसर बन गई। अंततः कहा जा सकता है कि ऐसे आयोजन समाज में बौद्धिक जागरूकता, सांस्कृतिक संवाद और सकारात्मक परिवर्तन की दिशा में महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं। और हाँ, अगली बार जब पुस्तक मेला लगे, तो हम शायद पहले से बड़ी थैली और थोड़ा अधिक जेबखर्च लेकर जाएँ।

स्व से सब तक

उपेंद्र सिंह

बी. एससी. (विशेष) रसायन विज्ञान, प्रथम वर्ष

जीवन की यही माया है,
कभी धूप, कभी छाया है।
कभी हम संतोष को पाते हैं,
कभी रोष में डूब जाते हैं।

परंतु निरंतरता वह कड़ी है
जो सबको पार लगाती है।
बार-बार हारने वाले की
अंत में नौका वही पार लगाती है।

सीखते रहो इन हिचकोलों से,
टकराते रहो इन शोलों से।
वीर वही कहलाएगा
जो हर बार उठकर वापस आएगा।

मैं तुम्हारा आह्वान करता हूँ,
क्या जीत नहीं सकते 'स्व' से?

यह स्वयं की ही तो लड़ाई है,
बस दृढ़ निश्चय की ही तो कठिनाई है।
क्योंकि जो स्वयं को बाँध न सकता है,
वह विजय को साध कब सकता है?

हारो चाहे कितनी बार,
पर करो अपना पूर्ण वार।
कब तक डरते रहोगे तुम?
कब तक गिरते रहोगे तुम?

हर रात का सवेरा आता है,
क्योंकि कर्म स्वयं उसे ले आता है।
नियति यही है समाज की
जब बात आए राज की।
शासन वही करता है
जो सबके साथ से चलता है।

और जब बात सबकी आती है,
तब शक्ति आवाज़ लगाती है।
राज उसी का आएगा
जो समय से तेज रह पाएगा।

कार्य सबके साथ करो,
पर स्वयं में निखार करो।
जब स्वयं से तुम जीत जाओगे,
किसी से मात न खाओगे।

ध्यान सही पथ पर रखकर तुम
सबके अनुयायी बनो।
कार्य ऐसे करो कि
सबके हितकारी बनो।

रुख़सत-ए-यार

लियाक़त अली

बी. ए. (विशेष) दर्शनशास्त्र, द्वितीय वर्ष

मेंरे हमनवा मेंरे हमनशीं मेरी जान-ए-ज़ा ये फ़ितूर है
चाहे रोक ले या पास आ, होना हिज्र भी ज़रूर है

तुझे मामले की नहीं ख़बर, चाहे घूम ले तू दर-ब-दर
हुई इंतिहाई तौहीन भी, पर न इसमें तेरा क़ुसूर है

न हो रहा पहली दफ़ा, न है ये आख़िरी बार ही
जा जान क़िस्सा-ए-सलार, क़िस्सा बड़ा मशहूर है

न है तू यहाँ कोई ख़ुदा, न मैं हूँ कोई रसूल ही
न है ऐसी कोई बंदगी, न ये जगह कोह-ए-तूर है

स्वयं की खोज

श्रेया शिवहरे

बी.ए. (विशेष) इतिहास, प्रथम वर्ष

उत्कृष्टता के होते हैं उद्गम जहाँ,
ढूंढू इस चलत जगत में
मैं कुछ ठहरे नश्वर निशा,

जीवन मेरा तमस का द्यूत
इसमें सूर्योदय हो कोई अद्भुत
जो जीवन का उज्ज्वल आधार बने।

रण छटे जब प्राण जाए,
कुछ प्रण पूरे हों ऐसे कि
पराजय भी मिले तो कहलाऊँ मैं चेतक,
जो रण लगे मुझसे विकराल काल के सूतक
वे बस मेरी निर्बल सूक्ष्मता है सूचक।

कुछ स्वयं की खोज हो,
कुछ सत्यता का बोध हो,
अथक प्रयास जहाँ पूर्णता से मिल जाएँ,
एक ऐसे बिंदु की खोज हो।

यह रण उत्तम,
मेरा प्रण उत्तम,
उत्तम हर प्रयास हो,
जब भरी सभा में मेरी पराजय का उपहास हो,
वहाँ भी सम्मानित, चर्चित मेरा प्रयास हो।

विजय का प्रमाण जयघोष की गूँज नहीं,
शौर्य का कोलाहल और रिसते लहू की धार हो।
सफलता का मापदंड वो विजेता न हो, जिसके गले में हार हो,
अथक प्रयासों से घायल उस योद्धा की भी जयकार हो,
जिसके भाग्य में तथाकथित हार हो।

विजयमाला से सुशोभित वे छाती नहीं,
जिस पर हों फूलों के हार तने,
तन से पल-पल बहता रक्त मेरा श्रृंगार बने ।

दीवारों पर रंग उतरता

निखिल पाण्डेय श्रावण्य

बी. ए. (प्रोग्राम), प्रथम वर्ष

बंद दरवाज़ें सूने आँगन,
झाँझर बोले टपकें बूँदन।
छत की सीली साँसें गुनतीं,
बीते क्षण की मौन धुनन।।

दीवारों पर रंग उतरता,
बीते त्योहारों का कर्ता।
अँगना पूछे - "कब लौटोगे?"
मन कहता - "अब कौन धरता?"।।

थकी हवा जब खिड़की छूती,
बुझी दीप की बात हैं कहती।
एक समय था, गीत थे बजते,
अब तो चुप्पी रात हैं बहती।।

बंद दरवाज़ें, धीमे सुर में,
सपने सूखें, पर मन न बँधे
टपक-टपक हर बूँद–
कहे कहे कंधों की थकनें।

लोक की थाती सहेजता 'चन्दन-किवाड़'

(पुस्तक समीक्षा)

प्रतीक शर्मा
बी. ए. (विशेष) हिंदी, द्वितीय वर्ष

घर की खोई हुई गीत-डायरी की तलाश!

चन्दन किवाड़ को पढ़ते हुए बार-बार मुझे अपना घर याद आया। दादी याद आईं। वह कोई भी प्रसंग शुरू करतीं और बात धीरे-धीरे गीत में बदल जाती। जन्म हो, जनेऊ हो, ब्याह हो या यूँ ही बरामदे में बैठी दोपहर, हर अवसर का एक गीत था। हमारे घर में सचमुच एक कॉपी थी जिसमें कजरी, सोहर, नचारी, बटगमनी, विवाह-गीत सब लिखे थे। माँ उसी कॉपी से गाती थीं। फिर धीरे-धीरे वह कॉपी गुम हो गई।

शायद 'चन्दन किवाड़' पढ़ते हुए मुझे उसी गुम हो चुकी कॉपी की याद सबसे अधिक आई।

मालिनी अवस्थी की यह पुस्तक केवल संस्मरण नहीं है; यह लोक के प्रति उनकी अकुंठ आस्था का दस्तावेज़ है। वह लिखती हैं कि उन्होंने लोक की भक्ति की है, लोक में जीवन के रहस्य खोजे हैं। किताब के पन्नों में सचमुच वह विश्वास जीवंत होता हुआ दिखाई देता है।

आज हम ऐसे समय में हैं जब स्थानीय विविधताएँ धीरे-धीरे मिटती जा रही हैं। विस्थापन ने हमें 'कहीं का न रहने' की स्थिति में ला खड़ा किया है। ऐसे में यह किताब याद दिलाती है कि हमारी जड़ें अभी भी जीवित हैं- गीतों में, स्मृतियों में, सामूहिक आवाज़ों में।

मुझे सबसे अधिक छूती हैं वे जगहें जहाँ मालिनी जी लोकगीतों की गहरी व्याख्या करती हैं।

जैसे,

"गंगा रेती पे बंगला छवा द मोरे राजा..."

रेत पर बंगला? जो टिकेगा ही नहीं। वह इसे प्रेम की अमरता के रूप में पढ़ती हैं। सब मिट जाएगा, बस प्रेम बचा रहेगा। यह व्याख्या पढ़ते हुए लगा कि लोक कितना सरल दिखते हुए भी कितना गहरा होता है।

इसी तरह "रेलिया बैरन पिया को लिए जाए रे..." को वह केवल विरह का गीत नहीं मानतीं; उसमें औपनिवेशिक शोषण का इतिहास भी देखती हैं। रेल जो प्रगति का प्रतीक कही गई, वही बिछोह और बंधुआ मज़दूरी का माध्यम भी बनी। लोकगीत में इतिहास की छाया दिखाई देने लगती है।

इस किताब की एक बड़ी विशेषता यह भी है कि यह परंपरा का अंध-गौरव नहीं करती। जब उन्हें सोहर गीतों में पुत्र-प्राथमिकता दिखती है, तो वे बेटी के जन्म का मंगलगीत रचती हैं।

"सुनयना को हरष अपार, सिया को जनम भयो..."

यही तो सच्चा कलाकार करता है। परंपरा को तोड़ता नहीं, उसमें हल्की-सी हलचल पैदा करता है।

मुझे यह भी अच्छा लगा कि मालिनी अवस्थी लोक और शास्त्रीय के बीच किसी हीनता-बोध से नहीं लिखतीं। वह शास्त्र जानती हैं, पर लोक को किसी प्रमाणपत्र की ज़रूरत नहीं मानतीं। लोक उनके लिए मन की सच्ची उड़ान है, बंधनों से मुक्त, जीवन से सीधा जुड़ा हुआ।

नकटे गीतों और स्त्रियों के स्वाँग पर उनका लेखन पढ़ते हुए लगा कि लोक ने स्त्री को बोलने की जगह दी थी, बिना घोषणा, बिना आंदोलन के। बरात के जाने के बाद स्त्रियों का खुलकर गाना केवल हँसी-ठिठोली नहीं, बल्कि दबे भावों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति है।

इस पुस्तक को पढ़ते हुए बार-बार लगा कि लोकगीत केवल सुर नहीं, स्मृति हैं। वे अनाम लोगों की आवाज़ हैं, उन कवियों की, जिनका नाम नहीं, पर जिनकी पंक्तियाँ पीढ़ियों से जीवित हैं।

'चन्दन किवाड़' मेरे लिए लोकगीतों का अध्ययन-ग्रंथ कम और घर की उस खोई हुई डायरी की वापसी अधिक है। यह याद दिलाती है कि हम आधुनिक होते-होते कहीं अपनी ध्वनियाँ तो नहीं खो बैठे?

मालिनी अवस्थी ने लोक को मंच पर गाया ही नहीं, उसे समझने की दृष्टि भी दी है। उन्होंने नई पीढ़ी के लिए लोक का पुनराविष्कार किया है, बिना शोर, बिना आग्रह, बस विश्वास के साथ।

यह किताब पढ़कर मन में एक ही बात रह जाती है।

गीत अभी मरे नहीं हैं।

बस हमें अपने घर के किवाड़ फिर से खोलने होंगे।

और शायद उसी चन्दन-सुगंधित किवाड़ के पीछे हमारी सांस्कृतिक स्मृति अब भी हमारा इंतज़ार कर रही है।

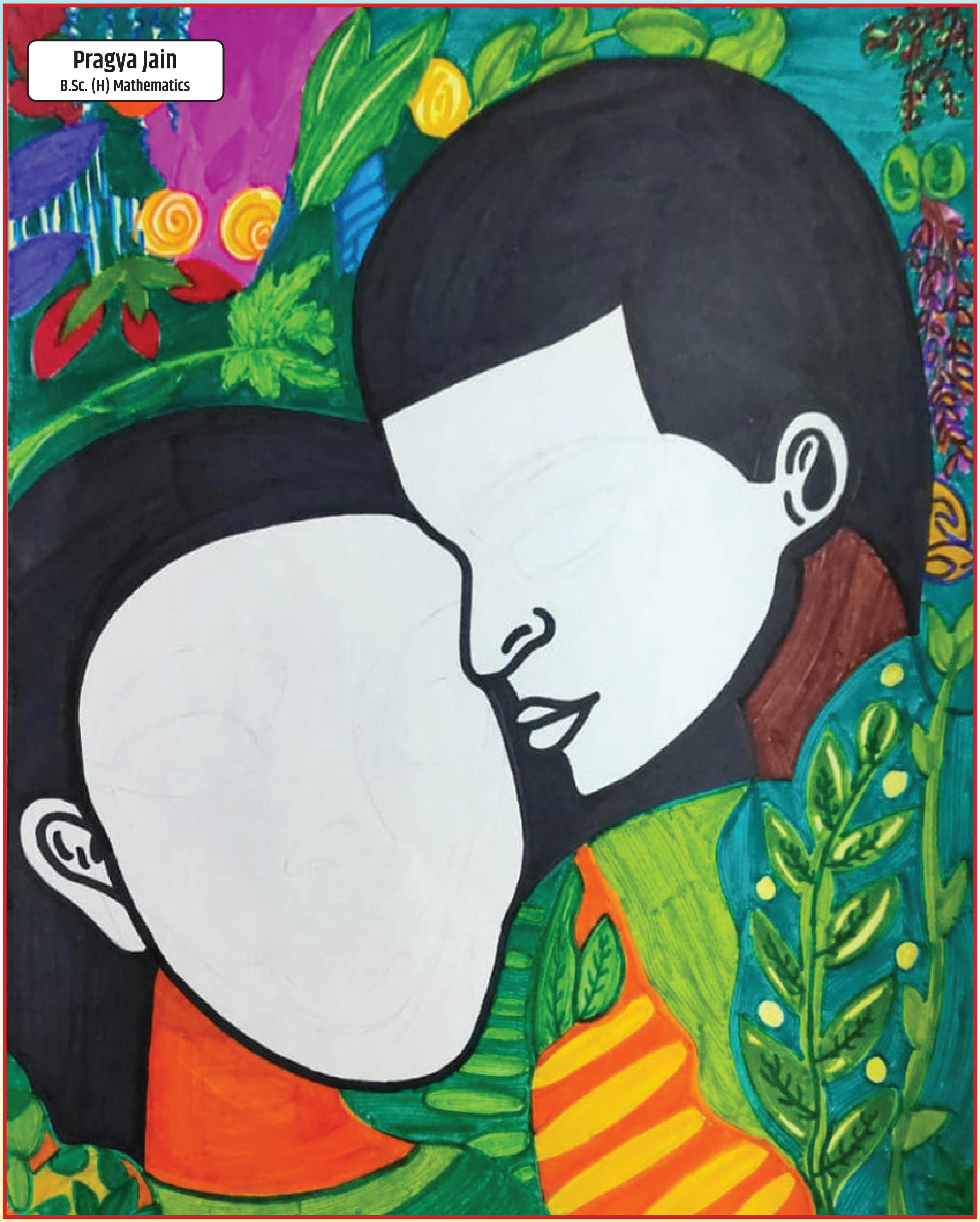

Pragya Jain
B.Sc. (H) Mathematics

Pragya Jain
B.Sc. (H) Mathematics

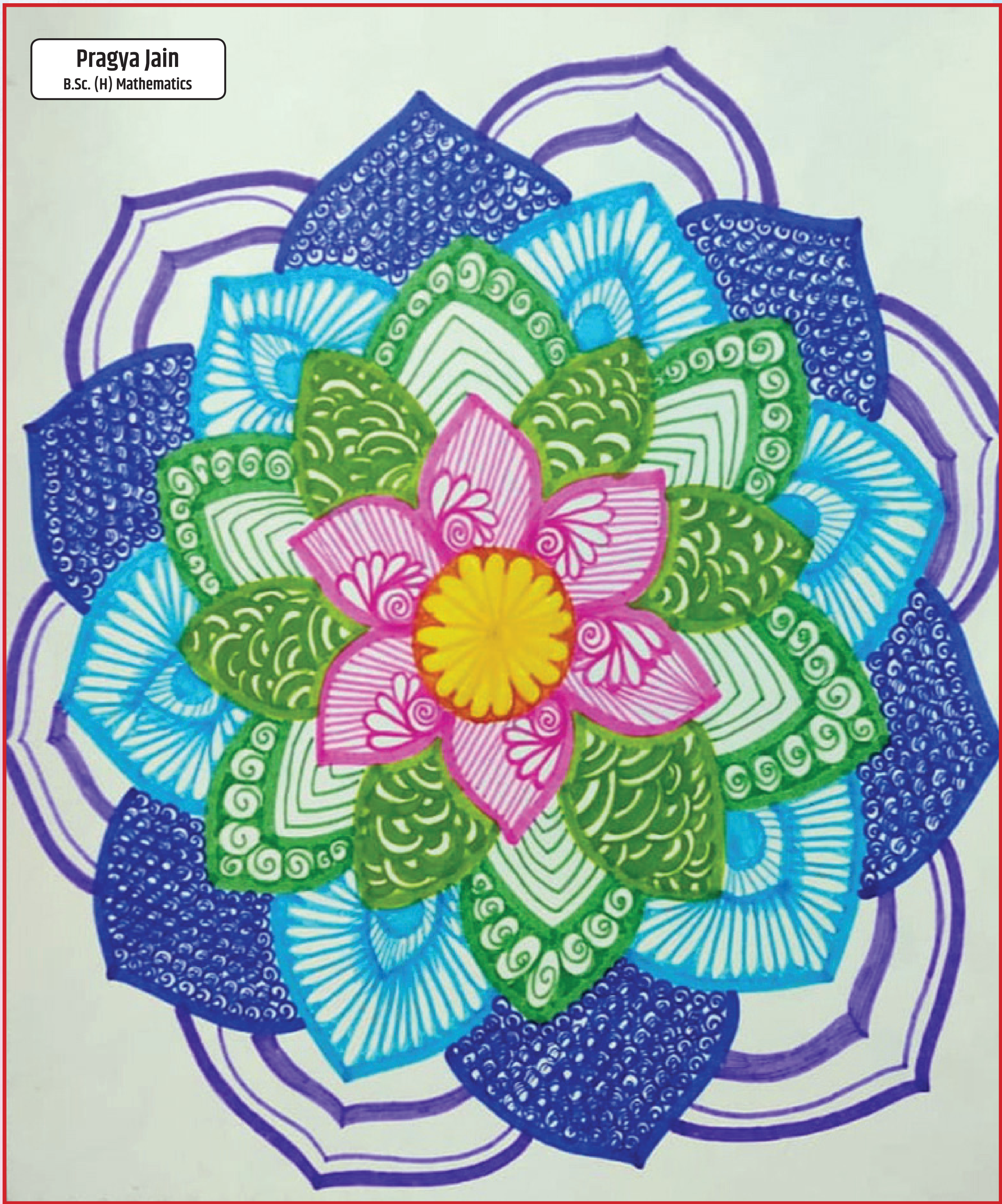

ENGLISH SECTION

Editorial Board

Dr. Prachee Dewri
Dr. Santoshi B. Mishra
Ms. Aneesha Puri

Student Editors

Owais Mohamed
Saima Bhalla
Priyanshi Kohli

The Heath Anthology of American Literature
THE NORTON ANTHOLOGY OF ENGLISH LITERATURE
ENGLISH LITERATURE
MAKING LITERATURE MATTER
Making Literature Matter
LEGACIES
LITERATURE
LITERATURE
THE NORTON ANTHOLOGY OF ENGLISH LITERATURE
The Heath Anthology of American Literature
AMERICAN LITERATURE
THE AMERICAN TRADITION IN LITERATURE
Frontier
THE NORTON ANTHOLOGY OF ENGLISH LITERATURE

INDEX

SHORT STORIES

1. A Pair of Jazz Jeans - Heeba Aziz BA Programme, 1st Year ---------- 33
2. Beyond the Filter - Meenu Kumari BA Hons. Sanskrit, 2nd Year ---------- 34
3. The Paradox of Love - Kirti Sunda ---------- 35

POEMS

4. Cosmos - Shubhojeet Chatterjee MA English, 1st Year ---------- 35
5. Where Roses Learn to Bleed - Nikita Agrawal B.Com Hons. ---------- 36
6. The Power Within – Khushi BA Programme, 2nd year ---------- 36
7. The Waiting Room - Ravleen Kaur B.Sc. (Hons) Mathematics ---------- 36
8. The Exegesis of the Self - Shaurish Bhattacharjee BA (Hons) History, 1st year ---------- 37
9. What's in the title - Shreyash ' Raahi ' Pandey B.Sc. (Hons) Electronic, 1st Year ---------- 38
10. Wings of Wax - Ravleen Kaur B.Sc (Hons) Mathematics ---------- 38
11. The Sheathed Sword - Shubhojeet Chatterjee MA English, 1st Year ---------- 38
12. About Myself - Nitin Gurjar MA History, 2nd year ---------- 39
13. The Frost That Didn't Touch Him - Ravi Raj Physics Hons, 2nd year ---------- 39
14. When the Day Falls - Nikita Agrawal B.com Hons ---------- 39
15. Powerless - Shubhojeet Chatterjee MA English, 1st Year ---------- 40
16. Star - Nikita Agrawal B.com Hons ---------- 40
17. A Letter from a Daughter to Her Mother - Kirti Sunda ---------- 41
18. Chilika in Fragments - Hansika Sahu B.Com (Hons) II Year ---------- 41
19. Unspoken! - Nikita Agrawal B.Com Hons ---------- 41
20. The Burden of Choice - Shubhojeet Chatterjee MA English, 1st Year ---------- 42
21. A Sailor's Poem - Shreyash ' Raahi ' Pandey B.SC Hons Electronic, year 1 ---------- 42
22. The Button (or Galactic Park) - Shubhojeet Chatterjee MA English, 1st Year ---------- 43
23. The Flicker - Ravleen Kaur B.Sc (Hons) Mathematics ---------- 44

PROSE

24. Why Your 200MP Camera Still Takes Potato Quality Photos? - Hansika Sahu B.Com Hons, II Year-------44
25. The X Factor - Nitesh Sahu BA Hons English, 1st year ---------- 45

A Pair of Jazz Jeans

HEEBA AZIZ
BA Programme, 1st Year

For the last 3 months, I've been watching my father go pale and dozing with his mouth open. This sight was filling my heart with fear, yet I didn't feel like saying this to him and to myself as well.

Now, it's been 1 month since my dad was making time for me in the evenings. I always saw him laughing and making cute, silly jokes. He wanted me to be an adventurous, fun-loving, and easy-going person just the way he was. Every Sunday, he would take me to the streets of Westminster Abbey, and then we would be laughing and eating at Smithfield neighbourhood. My father, Raghavan Naidu, came from an orthodox Hindu family, yet he was not at all an orthodox person. He was more of a patriotic person. He taught me Tamil and Hindi and always reminded me of being an Indian. My tongue sang the national anthem before spelling any religious text.

My father's personality never matched his job. However, he was phenomenally successful in his field. He was a renowned lawyer and a senior professor at the London School of Economics and Law.

It was a beautiful Friday morning, and the Sun was dazzling like gold flames. My heart was pounding with excitement. The flipped page of the calendar that said 24 August 1934 was casting footprints of new beginnings. I was calm and anxious at the same moment. Finally, the Sun's shadow marked 1 PM, and the doorbell rang. With my shaking little fingers, I opened the door.

"Aww, my little daughter", my dad's friend hugged me tightly. I felt coziness in his arms, the way I used to feel in my dad's arms. But neither of the two was the same person- neither me nor my dad.

The smell of my dad's shirt, his glittering eyes, and a broad, shining smile. His tender kiss on my forehead always made me feel that he was proud of me, even if I had not achieved anything. He was alive and forever will be. Clothes hold memories, and this was something I learnt from him. However, he never talked of this.

That pair of jazz costume jeans that always hung at his room's door was like a monument, full of curiosity and assumptions for me. He never threw them away, nor did he ever talk to me about that. He never kept that inside a cupboard. The only time he placed that safely after ironing properly was when he got sick 2 months before.

I always obeyed my dad and adhered to whatever he said. I left everything the way they were. His words were flittering in my ears- "You don't need to hold onto the things. For life goes not backward nor tarries with yesterday. Whenever you are about to step into a new world, discard everything behind. For you are already carrying the soul, you don't need to carry the body."

Iyer uncle was sitting in the lawn with a cigar in his hand, giving me gestures with his eyes to be ready. We will be leaving soon for India.

Iyer uncle was not a new face for me. I had met him before on a Christmas Eve. He is a loving and caring person, but his jolliness sometimes becomes a trap for him. It was he who revealed that I'm adopted and my dad never married. On that Christmas Eve, we were laughing and making fun of my dad. My dad was telling me that my eyes resembled those of my mother. Iyer uncle laughed profusely while sprinkling wine from his mouth, "A woman!! Do you even know a woman personally?" While laughing, he patted hard on my dad's back and said, "We got this cute little brat from Church, man."

This made me sick for a whole week, and after that, my dad never let me talk to Iyer uncle. I was 12 at that time, but now I'm 19, and this fact never affected my dad or me. I don't hate Iyer uncle, instead I love him because he has always treated me like his own daughter.

I stepped out with my uncle, but my inner self told me to take a last look at those jazz jeans that were too close to my dad. I opened the cupboard and touched those jeans for the first and the last time. Surprisingly, I got an old, brown, small, creased piece of paper. It said, "Ellie, I'll be joining you at the airport." Along with that, I got a photograph of my dad with a smiling woman in a jazz dance costume. They were holding a trophy together, and names were written at the end of the picture– Raghavan Naidu and Ellie Johnson, 1866, Bombay. The picture was taken at the time of a dance competition.

With so many wondering thoughts and unanswered questions, I decided to leave. I left the things in their respective positions and took my dad's black robe with me. It was my dad's identity, and so will be mine.

On our way to India, I enjoyed myself crazily with my uncle. His funny comic timing and sense of humour were enough to make a dead person laugh. He talked about my dad's college years. He was a student with oily hair. He was a bookworm, and so was a topper. He never liked social gatherings, and how he had completely transformed into an entirely different person. We reached India- my nation, my home!

The next morning, I left for Bombay. It was my first day at Government Law College, Bombay, and obviously, I was immensely nervous to step into my college life.

My first professor was an old woman, maybe in her late 80s. Although her face was English, she was Indian in her behaviour. Draped in a khadi saree, serious in her tone, she introduced herself-

"I'm Ellie Johnson, and I'll be teaching you the Constitutional law of India...."

BEYOND THE FILTER

MEENU KUMARI

BA Hons. Sanskrit, 2nd Year

When Ananya posted her picture, it was simple- no heavy filters, no perfect lighting. Just her, smiling after a long day. Within minutes, the comments appeared. "Try a better filter." "You'd look better if you lost some weight." Her smile faded.

She started noticing flaws she had never cared about before. How could a few strangers make her question herself so easily?

The next day, she overheard classmates laughing at someone else's photo online. That's when she understood - people are quick to judge a face on a screen, but they rarely think about the heart behind it. And when someone writes something cruel, they reveal their own character, not someone else's flaws.

That evening, Ananya looked at her picture again. This time, she saw strength, effort, and dreams. She didn't delete the photo. She turned off the comments. Because beauty isn't decided in a comment section. It's decided by how you choose to see yourself.

THE PARADOX OF LOVE

KIRTI SUNDA

An old woman… in search of the love she lost after the sudden death of her husband.

While taking off her bangles, she looked at him one last time with eyes full of hope, and as she said goodbye, she gathered all her hopes back into herself.

Today, I heard the echo of her lost hope when she said —

"Why hasn't science invented something miraculous yet, something that could bring a dead person back to us after a year or two?

"Why hasn't such a wondrous invention been made?"

"Today, I am left alone, and he has gone, leaving me behind—alone in this crowd where I feel isolated even among so many people."

Now, even that village feels unfamiliar to her, and the house they built together through countless responsibilities has also become a stranger because a home is not made of walls and decorations, but of the people you love.

Why does nature bring two people so close if life is destined to be divided into two separate parts?

Why does it show dreams to two souls who begin their life's journey together but can never end it together?

COSMOS

SHUBHOJEET CHATTERJEE

MA English, 1st Year

The vast cosmos beckons me,
Sprawling, spiralling, sublime.
The magnificent radiance of the stars,
It calls me.
The vast cosmos beckons me,
The devouring black holes,
The exploding supernovas,
The invisible dark matter,
I was meant to be in their midst.
The vast cosmos beckons me,
Made from the atoms created
Through the Big Bang,
My body yearns for the grand spectacle,
To reunite with the particles it came from.
The vast cosmos beckons me,
This planet of mine,
Evolving over a billion years,
Is too small to contain me.
The vast cosmos beckons me.
I do not want to be an astronaut.
Looking into the night sky, I realize
The stars are calling me.
So I answer
And leap,
Free, free,
Falling eternally.
Into the welcoming embrace
Of the glittering stars,
Reuniting with my origin,
An immortal canvas with a speck of dirt.
I belong here.
I have come.
And I will stay here,
Where I belong.
The vast cosmos beckons me.
The vast cosmos beckons me.

WHERE ROSES LEARN TO BLEED

NIKITA AGRAWAL

B.Com Hons.

I saw a garden with a bunch of roses,
Wanted to pluck one,
But it would be hurt if chosen.
The lamenting echoes of them,
Or the thorn that would hurt me.
It cries in pain
For me not to be drained
In their bloodshed.
I walked across,
Hearing their screams
Or watching their dullness.
It falls,
Falls from the crown of beauty.
The mesmerizing feeling, yet to not be guilty.
Without greenery around to grow,
Will there be any morrow?
Their lushness in the surroundings was nowhere to absorb.
The vibrant petals were all dead for sure.
The thorns in them had cut themselves,
To be seen in the mirror with bruises on them.
The deeply strived bud was now gloomy once again.
To be the flower, it needs water,
Rays of hope that will matter,
To grow and forgo their sorrow.
At last, the vibrancy can be returned,
And they will blossom the next morrow.

THE POWER WITHIN

KHUSHI

BA Programme, 2nd year

I am not made of fear and doubt,
I am the voice that speaks out loud.
Through silent nights and tiring days,
I find my strength in quiet ways.
I stumble, fall, and rise again,
Learning hope from loss and pain.
Every step, though slow and small,
Still teaches me not to fall.
The world may test my will each day,
Yet I choose light along my way.
For deep inside, I always find
A brave heart and a determined mind.

THE WAITING ROOM

RAVLEEN KAUR

B.Sc. (Hons) Mathematics

And I saw him again
not daring to get in,
just struggling to stand still,
trying to face the storms that reside within,
within the room,
or within him.
The curtains inside
still flutter when the breeze comes.
The doormat still hates being stepped on.
The walls still breathe the air caged for years.
The frame still waits, a memory of then.
There's something that calls to him,
every day, for years.
There's something that stops him,
every night, for years.
And I see him every day,
still trying to stand still,
and not daring to get in.

THE EXEGESIS OF THE SELF

SHAURISH BHATTACHARJEE

BA (Hons) History, 1st year

O in the brilliant cloud-shrouded night of Bhadrapada,
When the brilliant country of Gokula was abound with the grace of Indra,
I lay out of the hut to tend to the sheep
A quant night perturbed by the disgrace of downpour of the nimbus.
The son of Vasudeva, I saw
Lifted his flute to his crimson lips & poured his serene breath into the hollow reeds of the tube.
As the melody flowed to my ears,
My senses were washed with the elixir of his breath...
A tranquil smile fashioned my pale face
My eyes couldn't move away from his effulgent dark body,
His arched brows that felt like a crescent moon,
His eyes that felt like petals of a splendid lotus,
His nose that felt like Mount Meru,
His lips that felt like a half-cut leaf of Basil
The melody of his symphony veiled the sound of the falling clouds
Rivers flowed with the rhythm and
Cows walked towards the dark-skinned one.
Dreams abound the sleeping ones and
The moon lit up the clouds
The air added words to the music and
The wet grass added an aroma to his musical play
I listen to his melody with a quaint smile
Fixating my eyes on his crimson lips
I rest myself on the wet grass...
The more my ears experienced the nectar that was his rhythm
The less I could experience any other rhythm
The breeze didn't touch me
The rain didn't hit me
The moon didn't illuminate me
All I saw was him and him and him alone
I saw him in the silence between my breaths
I saw him in the darkness of my blink
I saw him in the flickering screen of the rain
I saw him in the kernel of my thoughts
I saw him and him and him alone
The one with the peacock feather overtook me
My senses paled and trickled down
Into the endless void of the world of senses
A serene feeling hit me
A Feeling of ecstatic union with the melody of the lotus-eyed one
I lay down on the bare grass...
My ears are gone, but I hear his flute
My hands are gone, but I touch his radiant self
My eyes are gone, but I gaze at his brilliance
My nose is gone, but I smell his fragrant form

His melody united with my senses,
The air my breath...the flute my limbs...
the rain my tears...the grass my skin...
The cows my conscience &
Madhava, my self...
I am proud of myself for being witness to my liberation...
A shepherd who realised the oneness of his form
A great man who experienced truth
A great man who experienced consciousness
A great man who experienced bliss
My self was the great self, I boasted
Languidly however, I rid myself of the thoughts of such
My conscience was washed with the knowledge of his grace
The feeling of myself left myself...
And then I lay at the lotus feet of the singer of the transcendental symphony.

WHAT'S IN THE TITLE

SHREYASH 'RAAHI' PANDEY

B.Sc. (Hons) Electronic, 1st Year

The sun will shine on us again.
Our paths will eventually be clearer,
Our lives will ultimately prosper.
Opportunities and destiny favour the brave,
even if the route is concave,
The divine will keep us safe.
Lost queen in chess can be regained,
Lost chances in life can be reframed.
Pleasant past can be relived once again,
Past glory can be retrieved once again.
The sun will rise on us again.

WINGS OF WAX

RAVLEEN KAUR

B.Sc (Hons) Mathematics

Ascending through cold,
Fraying the fog.
We rise. We reign.
The feathers are ready,
To rule over the sky.
Not everything came along
an essence of mine
nowhere to be found
It chose to stay behind.
When fighting with cold,
Something quivered through ice.
Slicing the fog
Yet
Bearing something,
Deep within,
Crafting, Holding
the Feathers
which need to survive.
Eventually,
Emerging,
Uncovering the feathers,
It hides.
It stays behind.
In shallows
In chaos
Deep within
Shunning the heights.

THE SHEATHED SWORD

SHUBHOJEET CHATTERJEE

MA English, 1st Year

I did not like to talk much. I still do not.
But one day, when, as was usual for me, I fell ill, fever
took hold of me.
Cough and cold followed.
I lamented, but diligently did everything
To recover a little sooner.
I got close to getting better.
But on the day my fever left me,
It took my voice away as well.
I had never liked my voice. I rarely used it,
Keeping my thoughts to myself.
My mind, a steel trap.
My lips, a welded door.
But only when something leaves you
Do you recognize its true value.
I realized now that even if I wanted to,
I could not speak out my thoughts.
Of course, the situation was not catastrophic.
It was just a little laryngitis.
A little saltwater gargle, some rest,
And all would be fine.
But I understood a tenet that day.
It is not about using the sword.
It is about possessing the sword.
For that split second that day,
I felt that I had become mute forever.
I did not feel regret at all the times I did not use my voice.
I did not lament that I had not learned to use it better.
I only felt that
Silence is not as beautiful as it seems
When it is no longer a choice.

ABOUT MYSELF

NITIN GURJAR

MA History, 2nd year

Full of Anger, full of Hunger
Full of Jealousy, Full of Fallacy
Yet, I am a Human.
Full of Arrogance, Full of Ignorance
Full of Laziness, Full of Lust
Yet, I am a Human.
Full of Desires, Full of Bizarre
Full of Vengeance, Full of Negatives
Yet, I am a Human.
Full of Nervousness, Full of Sadness
Full of Depression, Full of stress
Yet, I am a Human.
Full of Ego, Full of Dark
Full of attitude, Full of Non-gratitude
Yet, I am a Human.
Full of fear, Full of Uncertainties
Full of sleep, Full of Dreams
Yet, I am a Human.
Full of Diseases, Full of Drugs (Medicine)
Full of Shame, Full of Guilt
Yet, I am a Human.
This all is Mine, That's why I am human.

THE FROST THAT DIDN'T TOUCH HIM

RAVI RAJ

Physics Hons, 2nd year

Have you ever seen a man in a red jacket
swinging in a park all alone?
It was the coldest midnight of November —
I saw him from my balcony.
Maybe he needed a break,
or an escape from the comforts of a blanket,
or maybe some moonlight —
maybe anything.
I wouldn't know.
But I could feel the emptiness there — complete silence.
Trees asleep.
No birds to sing.
No dogs to bark.
Only a man with voices in his head.
I wondered how one could be so serene
on such a bone-chilling, frosty night.
Yet it was hypnotic to watch him
go back and forth on that swing.
I stood on the balcony for two or three minutes.
I wanted to stay more —
but I was frozen from head to toe.
I ran back inside, leaving him
with the full moon and a few stars.
And I still think —
how did he survive that cold spell so effortlessly
when I couldn't stand it for two minutes?
Maybe it was the warmth
of that Red Jacket
that I was missing.

WHEN THE DAY FALLS

NIKITA AGRAWAL

B.com Hons

When everything's down, streets are silent.
The daylight falls,
And there are stars in the sky that are glowing bright.
The light of the moon attracts me,
Embellishing the darkness of that night.
I need to sleep,
But romanticizing the night,
Dwelling in my utopian dreams,
With a perfect blend of everything
I could ever find, like a silver dream.
In my hand, there's a pearl,
Rousing me to a swirl.
The night is comforting,
A warm hug.
I need to sleep
And forget this realm.

POWERLESS

SHUBHOJEET CHATTERJEE

MA English, Year 1

The bedsheets were wet.
His feet were sprawled.
He was red all over.
The fan had stopped.
The AC was broken.
The cooler non-existent.
He was stripped to his boxers,
Yet he dripped like a dog.
The power cut was long.
The wait felt longer.
The windows were open,
Yet no relief was found.
Finally, the power came back,
And with a click,
The fan started to whir.
But before he could feel the wind,
He heard the sound of his heart stopping.
As the fan clicked and whirled,
It stopped after two rotations.
The situation was unbearable.
The suffocation was laid bare.
He let out a silent scream.
The rage was building up.
He was ready to kill,
Prepared to fight.
He picked up his phone,
Ready to dial.
He could feel
The power company bending his will supreme.
Sleep would be heavenly.
He would prevail.
Yet as he input the digits,
He set his eyes on the table.
He saw unread mails,
The bane of his existence.
A dread rose up.
A chill set in.
Yet no contentment was found,
For he found an unpaid bill.
In the end,
Money was the answer,
As it always is.
The phone rang.
While the anger left him,
It rang,
Taking the heat with it.
As the man said hello, he said,
"I want to pay my bill."
The man said, "OK."
As the balance dropped,
The power was restored.
He had survived the heat,
But he did not feel hot at all.

STAR

NIKITA AGRAWAL

B.com Hons

I was gazing at the stars,
Impressed by their beauty,
Admiring them in bliss.
The shine they emit empowers me
To outshine and rule the world.
They are very far from us,
But their beauty, the aura they behold, spreads everywhere,
Absorbed within me,
Mesmerizing me with their spark.
I want to be a star,
To be looked at by everyone
And be independent, having my own light, my strength.

A LETTER FROM A DAUGHTER TO HER MOTHER

KIRTI SUNDA

I'm grateful for you today and everyday.
For the stories we wrote while waking together,
For the displeasure she sensed without being told,
For the joys that were hers and she wrote into my destiny,
I'm grateful for you today and everyday.
For the immense light she gave me,
For the sleepless nights she spent for me,
For the food made by those hands,
I'm grateful for you today and everyday.
For the home she decorated for me, bit by bit,
For the feeling of security I only found in her arms,
For the countless expenses she bore for me without second thought,
I'm grateful for you today and everyday.
For the life she adorned for me like a star,
for the womb that brought me into this world.

CHILIKA IN FRAGMENTS

HANSIKA SAHU

B.Com (Hons) II Year

I try to remember a fading memory
The pages, the pictures, the poets I once knew.
In my mind, the water remains still,
Shimmering in pink, sometimes green,
With a brackish black hue.
Was it Sahityaka or perhaps Ama Sahitya?
A fragile textbook, its pages thinning with time,
Yet strong enough to unlock a desire in my mind.I recall the glimpses, the Greater Flamingos,
Ten, maybe twelve, hovering over Chilika,
A blush upon the blue.
Grade-school Odia is a forgotten lingo,
Yet I find my soul in this wild view.
In my homeland lies a secret best kept.
I feel a pull towards Chilika,
Like the guests from Siberia, Russia, and Mongolia,
While the rest of the world sleeps.
I think of Maa Kalijai, the island, her mysteries.
I think of the boat on that cyclone-torn day
Was it an accident? A conspiracy by foes?
Or a legend altogether?
Only She knows.

Author's Note:

This poem explores the nostalgia of childhood Odia textbooks (Sahityaka) and reflects on the loss of linguistic fluency in Odia, contrasted against an instinctive bond with the land. The verses are at Chilika, Asia's largest saltwater lagoon.

UNSPOKEN!

NIKITA AGRAWAL

B.Com Hons

Not a word uttered,
Yet those silences listened.
Nothing was shaken nor broken,
But everything was quiet,
Like a stillness embraced.
The morning glows so bright,
Bringing a beauty to gaze at,
Of the calmness that paves.
A cold breeze that blows,
And a drowsy sleep it borrows.
Alone to watch this sunset,
But not lonely to praise the beauty that it bears.
A melodious tune to soothe the mind,
After which everything felt too light.
As time passes, it all went dark,
Questioning me to believe a dream
Rather than the reality of the extremes.

THE BURDEN OF CHOICE

SHUBHOJEET CHATTERJEE
MA English, Year 1

Why do I have the burden of free will?
Freedom is an illusion.
My existence was not my choice.
Why could I not be an ignorant puppet?
A sack of flesh and blood, running on autopilot.
Take my freedom of thought.
Give me an anchor, a purpose.
Make me a robotic slave.
I do not want to be human anymore,
For to be human is the hardest thing in the world.
All I want
Is one true choice,
Either give me the freedom to live as I please,
Or make me a puppet I live to please.
The freedom I am looking for is not illusionary.
It is true freedom,
Where I am not burdened
By society and the world,
Where my only restrictions are my thoughts.
It is a greedy desire,
But that is what I truly wish.
Either I truly have a choice,
Or I have nothing at all.
A puppet would be
The more economical choice.
No wants or whining,
Just an obedient order obeyer.
But if you make me a puppet, do not make me defective.
Make me perform the functions you designed me to.
Do not leave any extra space for anything.
A puppet should not have aimless wandering
Or useless thoughts.
A puppet is not made to ponder. He is a product.
Does it matter if his goal is manufactured?
No. A purpose is a purpose.
I would rather be a puppet
Than to have no purpose at all.
I would rather have no free will
Than to wander around lost.

A SAILOR'S POEM

SHREYASH ' RAAHI ' PANDEY
B.SC Hons Electronic, year 1

Starry night, sailing was I,
All alone, with a dull sigh.
Nothing I knew,
Nothing I had,
Saw people passing by,
Watched them with a vibrant eye.
They picked me up and nurtured me like their own,
I don't know what they had sown.
One day, they left me to a new world,
With some sprout in me.
New people picked me,
"What healthy roots in thee!"

THE BUTTON (OR GALACTIC PARK)

SHUBHOJEET CHATTERJEE
MA English, Year 1

The human experience,
It is sickening.
What does it mean to be human?
To laugh, to love, to live.
To cry, to hate, to die.
To rage, to crave, to harm.
To reconcile, to give, to help.
Yes, it is a veritable kaleidoscope,
A cornucopia of experiences.
Yet it is pathetic.
It is disgusting.
I am sick to my core.
At the multitude of humanity.
Yes, I too am human, and I detest myself too.
I do not exclude myself from my hate.
It is all-encompassing.
Which is why I have decided
To take up the offer
That was made available to me.
In two minutes,
The Earth will be gone.
It will collapse into itself,
Forming a black hole.
You see,
A group of intergalactic aliens
Wanted to build a true star park,
So they decided to empty out
A bit of space.
Our solar system was the perfect size.
The planets were a bit of an eyesore, though.
They needed to go.
But it was not complicated.
They just needed an origin point
For the upcoming destruction.
So, they picked a planet at random
And landed on Earth,
As it was the most colorful.
Collapse it into a black hole,
And the powerful gravitational force
Shifts the orbits—
A chain reaction.
And soon, the planets were gone.
The aliens saved the Sun
And Saturn's rings, too.
After all,
The park needed some local culture
For the tourists.
But intergalactic law requires
A local volunteer.
And lo and behold,
There was I,
Just the man for the job.
The offer was simple.
I could safely leave Earth
And tour the universe
If I managed to collapse the planet.
I get a universal tour,
And humanity is no more.
Our motivations were different,
But the objective was the same.
Destroy the planet.
Enjoy the glorious moment.
Collect my payment.
And be on my way.
It was a splendid offer.
The technology was there.
The expenses were all paid.
The galaxies calling me.
All I had to do was
Press a button.
So, I did it.
Wouldn't you?

THE FLICKER

RAVLEEN KAUR, B.SC. (HONS) MATHEMATICS

It was a gloomy day.
The sky was lit, yet vague, a haze of tears falling to the ground.
It seemed the clouds were finally letting go of what they’d held for so long.
Water, it may seem, but deep down, it was everything the little girl had ever aspired to.
And yet, all she felt was the warmth of a streetlight.
A lamp flickered nearby. For a moment, it comforted her...
But soon, it too left her.
All she was left with were the unread words.
Maybe she already knew what they were.
Maybe she already knew how they’d feel
like blazing sunlight just after rain.
But all she wanted… was a flicker of warmth in this fog.
All she feared was the rumble of the approaching bus.
And all she longed for
was the flickering light she once felt,
if only for a moment.

WHY YOUR 200MP CAMERA STILL TAKES POTATO QUALITY PHOTOS?

HANSIKA SAHU, B.COM HONS, II YEAR

Buying tech in 2026 feels more like a sport than experiencing that shopping dopamine. It happened to me twice. First, when I was hunting for a laptop for college, and recently, when I needed a new phone. I thought I was smart. I looked at the RAM, the storage, and how shiny the back panel was. But I soon learned that specification sheets are like dating profiles; they highlight the gym selfies and conveniently hide the emotional baggage.

After drowning in a sea of specifications, I realized one universal truth - The Processor is King. Everything else is just a court jester.

So, what exactly is this magic chip? For those who think a ‘Core’ is just an ab workout, let me explain by referencing my culinary obsession. Think of your phone as a restaurant kitchen. The Processor (SoC) is the lead chef. The cores are the number of cooks in the kitchen. More cooks (8-core) means you can chop veggies and knead dough at the same time.

Clock speed (GHz) determines how fast those cooks are working. RAM is the kitchen counter. The bigger it is, the more plates you can have out before things start falling on the floor. If you have a slow, lazy Chef (a bad processor), it doesn’t matter if you have a massive kitchen (12GB RAM) or the fanciest ingredients (200MP Camera) - your dinner is still going to be late and burnt.

My search for a new phone started on YouTube, but that just left me more confused, so I used AI tools like Gemini dig into the actual user complaints. I found that certain models of Samsung A series often acts like a pocket heater because of its Exynos chip, while OnePlus is still haunted by that scary green line display issue, so much so that the company offers lifetime replacement for this (I have read all their notifications, I know I’m desperate), Redmi and Realme just did not feel like my taste, Motorola tends to start lagging after a year, and Apple’s battery life is about as reliable as a friend who says “I’m five minutes away”. But they are not.

Through all this, I learned that the chip inside matters most: Snapdragon is usually the safe, reliable choice, and MediaTek has surprisingly caught up to become a strong contender, but you generally want to avoid Samsung’s Exynos chips unless you enjoy paying a premium price for a phone that runs hot.

Geekbench vs. AnTuTu. You’ll see these numbers thrown around in video reviews on YouTube. So, how to actually interpret them so you don’t get scammed? Well, think of Geekbench as an IQ test for the ‘Chef’ (Processor). Single-Core Score is important for scrolling Instagram or opening apps, while Multi-Core Score is important for gaming or editing videos. Rule of Thumb: Higher is better. If a phone costs 50k but has a lower Geekbench score than a 40k phone, run away, a.k.a. swipe left. AnTuTu is a full-body physical exam. It tests everything from CPU, GPU (graphics), Memory, to UX (user experience). A score of 1 Million+ is the sweet spot in 2026. Anything below 500k will likely cause lag problems.

The biggest lie that I used to believe earlier was that more megapixels automatically mean better photos. I found out the hard way that a 200MP camera on a xyz phone usually takes worse pictures than an old 12MP iPhone. The reason behind this is the ISP (Image Signal Processor), which is a tiny part of the main chip that acts like a digital artist. A good processor takes the raw data and instantly turns it into a vibrant, crisp photo, while a weak one struggles to handle all those pixels, leaving you with 'shutter lag' and grainy, washed-out images. This is why brands like Apple and Google can use smaller numbers but still destroy the competition.

So, when you're buying your next device, don't get blinded by the shiny numbers on the box. Check the processor and the benchmarks first, because a fancy kitchen means nothing if the chef burns the water.

THE X FACTOR

NITESH SAHU, BA HONS ENGLISH, 1ST YEAR

From dawn to dusk, we are chasing behind the art of perfection, oblivious of the faded charm within. We endeavour to clinch every possible milestone, even after grasping the incongruity beneath the rationale. Round the clock, we are labouring back-creakingly for being the TOP NOTCH, relinquishing the vital spark in our lives.

In every instance, we auto-populate our nerves with a relentless yearning for whimsical dazzles and niches of life in an overzealous approach, ending up weary of the trudge.

IS THIS THE TRUTH OF LIFE?

We often encounter certain exposures that enfeeble our robustness and zest for accomplishing the ends.

SOCIAL MEDIA is one of the ineluctable proprietors behind this excruciation.

We see ourselves falling apart whenever we spar the icon out of boredom.

We scroll on Instagram to check out people thriving. We glance at YouTube just to find the audience in elation at the countenance of supposed authentic reactors. We skim through Facebook to gape at the exuberance and grin deluging their faces.

Amid the exposure, we raise questions about our worthiness, craving for peer validation, and sweating blood to muster words of affirmation from the followers who are masquerading as well-wishers.

WHAT A SHAM!! (Phew...)

Does that mean we should give in? The obvious says NOPE!!

We need to rewire our minds with the fact that amid the rat race for superfluous ambitions, we tend to overlook the gentle buoyancy of being that has blanketed us.

We are often turning a blind eye to the vicissitudes of life, engendered by unseen tides of one's action, gnawing our grit with every step towards astray.

Try to embrace your life and relentlessly step into every possible opportunity that will tout your wits and inquisitiveness to reach an overarching summit.

Just grab the opportunities without thinking of the ends and adopt a sanguine approach to every worst-case scenario pelting you with self-doubts, insecurities, and inferiority complexes because you are potent enough to be the 1 per cent, to be the charm in oneself, to be the all-season winner.

The Bottom Line:

I'm not a spear header who would bestow ailment by allaying the dubiously knitted approach towards life or disguise as a scaffold for your unwavering triumph.

I've expressed my ambivalence through words as a medium to instill a sense of perseverance and determination if I lose hope down the line.

I've penned this for my future self or perhaps for the version of you yet to arrive.

REMEMBER

It's just a matter of ONE STEP... step in!

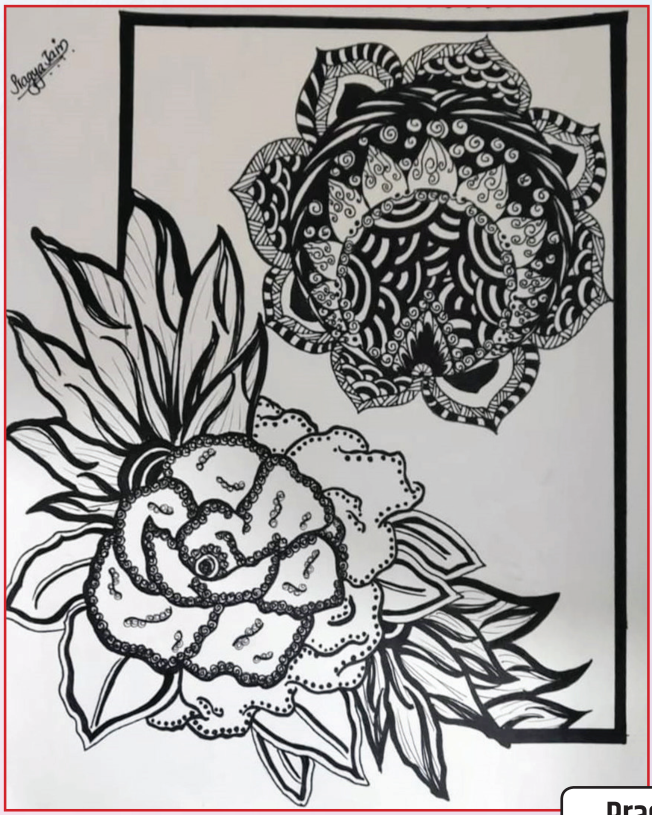
Pragya Jain

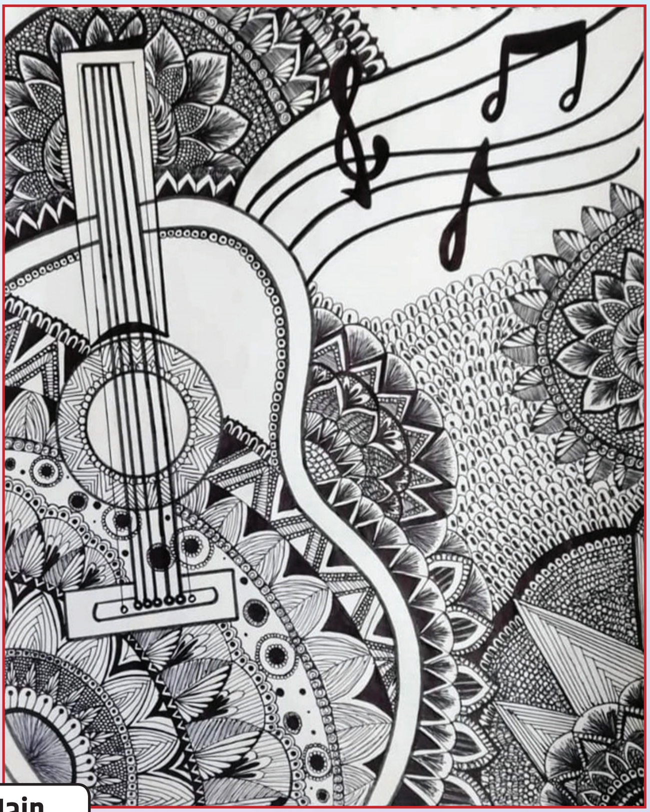

Pragya Jain
B.Sc. (H) Mathematics

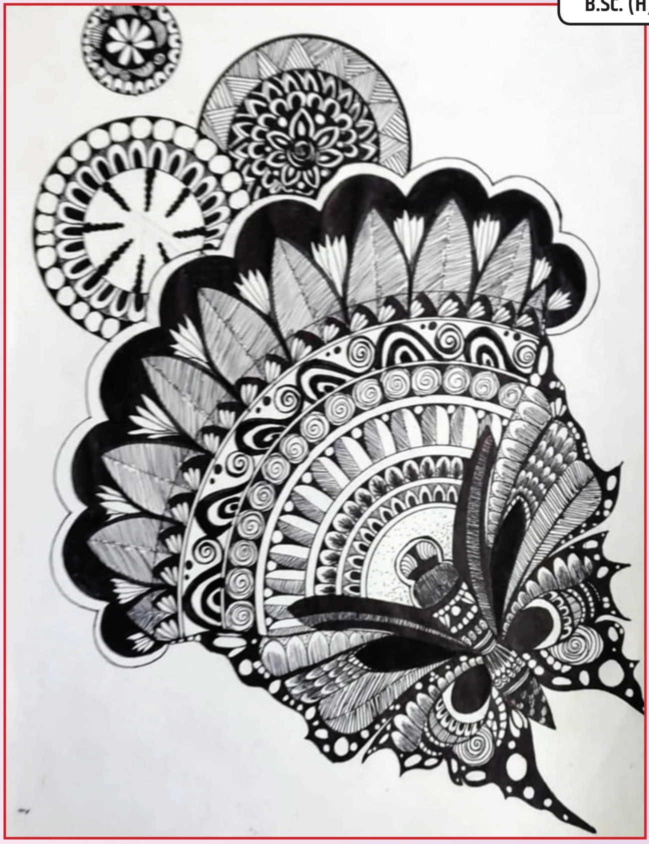

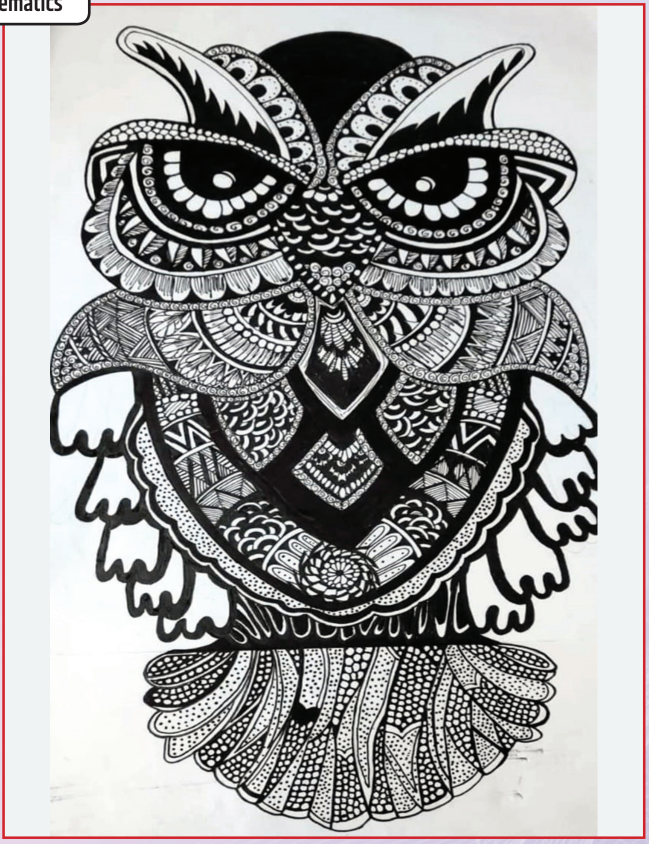

Pragya Jain
B.Sc. (H) Mathematics

PragyaJain

संस्कृतखण्डः

सम्पादकौ

डॉ. सतीशकुमारमिश्रः
डॉ. खुशबू शुक्ला

छात्रसम्पादकौ

पूर्णिमा
राखी कुमारी

ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्वेद

अनुक्रमणिका

1. उपनिषदां दार्शनिकं महत्त्वम् - पलकपाण्डेयः ----- 50
2. संस्कृतसाहित्ये नारीणां स्थानम्- शृंखला शुक्ला ----- 50
3. दण्डिनः पदलालित्यम् - अजयशर्मा ----- 51
4. संस्कृतस्य महत्वम् - प्रेरणा गौरः ----- 52
5. भारतीया संस्कृतिः - पूर्णिमा ----- 53
6. परोपकारः - धीरजः झा ----- 54
7. वैश्विकोपयोगाय कियती उपयुक्ता संस्कृतभाषा - सुंदरम्----- 55
8. संस्कृतम् - समयातीता एका भाषा - अंशुलः ----- 56
9. मध्यकालीनसंगीतस्य विकासः - मीनू----- 57
10. चन्दनस्य मूल्यम् - सिद्धार्थत्रिपाठी ----- 57
11. प्राचीनभारतीयसंस्कृतसाहित्ये तथा आधुनिकविज्ञाने सामञ्जस्यं संस्कृते नवाचारश्च - भूमिः ----- 58
12. युवा-शक्तेः महत्वम् - खुशी रावत ----- 58
13. नवीन-शिक्षा-नीतेः (NEP-2020) प्रमुखप्रावधानानि चुनौतयश्च - राखी ----- 59
14. आदर्शः छात्रः - नंदिनी मिश्रा ----- 59
15. शिक्षा तथा कृत्रिमबुद्धिमत्ता (AI) - लकी ----- 60
16. संशयात्मा विनश्यति - राकेशकुमारमिश्रा ----- 60
17. रसायनशास्त्रम्: भारतस्य प्राचीनरसायनविज्ञानपरम्परा - पीयूषपालः ----- 61
18. जिज्ञासा - मनीषा कुमारी ----- 63
19. मार्गस्थबालकारुण्यम् - अंकुशकुमारः----- 63
20. अत्र-तत्र - आंचल ----- 63
21. हस्तकुटुम्बम् - नेहा ----- 63
22. अल्पस्य हेतोर्बहु हातुमिच्छन् विचारमूढः प्रतिभासि मे त्वम् - कुमार आदर्शः ----- 64

उपनिषदां दार्शनिकं महत्त्वम्

पलक पाण्डेय:
स्नातकतृतीयवर्ष: संस्कृतविशेष:

उपनिषत्सु आत्मा नित्यः, अजरः, अमरः च इति वर्ण्यते। आत्मा देहात् भिन्नः अस्ति, स एव सर्वेषां प्राणिनाम् अन्तरात्मा। “अहं ब्रह्मास्मि”, “तत्त्वमसि”, “सर्वं खल्विदं ब्रह्म” इत्यादीनि महावाक्यानि आत्मब्रह्मणोः ऐक्यं प्रतिपादयन्ति।

उपनिषत्सु ब्रह्म परमसत्यं, जगतः कारणं च इति स्वीक्रियते। ब्रह्म निर्गुणं, निराकारं, अनन्तं च अस्ति। जगत् मायामयं किन्तु ब्रह्म सत्यं नित्यं च इति उपनिषदां दर्शनं अस्ति।

कर्म ज्ञानं भक्तिश्च इति विषयाणि उपनिषत्सु सम्यग्रूपेण विवेचितानि सन्ति। ज्ञानमार्गः मोक्षस्य प्रधानोपायः इति उपनिषदः प्रतिपादयन्ति। अज्ञानं बन्धनकारणं, ज्ञानं तु मोक्षकारणं भवति।

उपनिषदः मानवस्य नैतिकजीवनस्य अपि मार्गदर्शनं कुर्वन्ति। सत्यम्, अहिंसा, त्यागः, आत्मसंयमश्च एते गुणाः उपनिषत्सु विशेषतया प्रतिपादिताः सन्ति।

अतः उपनिषदां दार्शनिकं महत्त्वं अत्यन्तं विशालम् अस्ति। ताः न केवलं भारतीयदर्शनस्य मूलाधाराः सन्ति अपितु सम्पूर्णमानवजातये आध्यात्मिकं प्रकाशं ददति।

संस्कृतसाहित्ये नारीणां स्थानम्

शृंखला शुक्ला
स्नातकतृतीयवर्ष: संस्कृतविशेष:

संस्कृतसाहित्ये नारीणां स्थानम् अत्यन्तं गौरवपूर्णं महत्त्वपूर्णं च अस्ति। प्राचीनभारतीयसंस्कृतौ नारी केवलं गृहकार्ये सीमिता नासीत् अपितु सा विद्या, धर्म, दर्शनम्, राजनीतिश्चेत्यादिषु सर्वेषु क्षेत्रेषु सक्रियभागं वहति स्म।

वैदिककाले नारी विदुषीरूपेण प्रतिष्ठिता आसीत्। गार्गी, मैत्रेयी, लोपामुद्रा, अपाला इत्यादयः स्त्रियः वेदोपनिषदां चर्चासु भागम् अगृह्णन्। बृहदारण्यकोपनिषदि गार्ग्याः याज्ञवल्क्येन सह दार्शनिकसंवादः नारीबौद्धिकक्षमतायाः उत्कृष्टं प्रमाणं वर्तते।

रामायण-महाभारतयोः नारीपात्राणाम् उच्चं स्थानं दृश्यते। सीता त्यागस्य धैर्यस्य पतिव्रतधर्मस्य च आदर्शरूपा वर्तते। द्रौपदी साहस-आत्मसम्मान-धर्मादिबोधस्य प्रतीका अस्ति। कुन्ती, गान्धारी, सुभद्रा च विविधगुणैः अलङ्कृतास्सन्ति।

संस्कृतनाटकसाहित्ये अपि नारीणां महत्त्वं स्पष्टं दृश्यते। कालिदासस्य नाटकेषु शकुन्तला, मालविका, उर्वशी इत्यादयः नारीपात्राणि सौन्दर्यं, बुद्धिं, करुणां च प्रतिनिधयन्ति। ताः केवलं शोभामात्रं न, अपि तु कथानकस्य प्रेरणास्रोताः सन्ति।

धार्मिकसाहित्ये नारी शक्तिरूपेण पूजिता अस्ति। दुर्गा, सरस्वती, लक्ष्मी इत्यादयः देव्यः शक्तिस्वरूपाः वर्तन्ते। “यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः” इति उक्तिः नारीसम्मानस्य श्रेष्ठं उदाहरणं अस्ति।

अतः स्पष्टं भवति यत् संस्कृतसाहित्ये नारी सम्मानिता, सशक्तिता, प्रेरणास्वरूपा च अस्ति। सा केवलं समाजस्य आधारः न, अपि तु संस्कृतेः आत्मा अपि अस्ति।

दण्डिनः पदलालित्यम्

अजयः शर्मा
स्नातकतृतीयवर्षः संस्कृतविशेषः

संस्कृतगद्यकविमण्डले महाकविदण्डी सुप्रसिद्धोऽस्ति। तस्य विषये 'दण्डिनः पदलालित्यम्' इति भणितिः लोकप्रसिद्धा। किमत्र पदलालित्यम्? इति पिपृच्छायामुच्यते 'सुप्तिङन्तं पदम् ' इति सुबन्तं तिङन्तञ्च पदमिति आख्यायते। ललितस्य भावो लालित्यं माधुर्यमिति । यत्र पदेषु वाक्येषु शब्दसङ्घटनायां वा माधुर्यं श्रुतिसुखदत्वं वा समुपलभ्यते, तत्र पदलालित्यमिति मन्यते। पदलालित्यं शब्दसौष्ठवं चावर्जयति सचेतसां चेतांसीति, गुणोऽयं गरिमाणं तनुते काव्यस्य। पदलालित्यस्य गौरवं महाकविदण्डिकृतदशकुमारचरिते एवं विशेषेण दृश्यते।

आचार्यदण्डिकृतगद्यमहाकाव्यमिदं वैदर्भीरीतिप्रधानं वर्तते। सानुप्रासिकपदविन्यासमेव पदलालित्यस्य मुख्यकारणं भवति, परन्तु अत्र अनुप्रासिकचमत्कारेण सह यमकालङ्कारस्य योजना अपि अतीव मनोरमा वर्तते। महाकविः दण्डी सुबन्धुरिव 'प्रत्यक्षरश्लेषमयप्रबन्धबन्धे न रमयति मनः । नापि बाणभट्टवदयं रुचिरस्त्वरवर्ण पदेषु आधीयते मनः। परं प्रसादमधुराणि ललितललितानि भावगर्भितानि पदान्येवास्मै रोचन्ते। निश्चितमिदं यादृशं पदलालित्यं दण्डिकाव्ये दृश्यते न तादृशं कस्यचिदन्यकवेः काव्ये विद्यते। विजयार्थगन्तुकामानां कुमाराणां यमकालङ्कारालङ्कृतं वर्णनं दण्डिनः पदलालित्यं सूचयति-

"कुमारा माराभिरामा रामाद्यपौरुणा रुपा भस्मीकृतारयो रयोपहसितसमीरणा रणाभियानेन यानेनाभ्युदयाशंस राजानमकार्षुः "

एतादृशं मनमोहकं हृदयावर्जकं पदलालित्यं कवेर्वैदुष्यमेव रञ्जयति विदुषां चित्तम्।

महाकवेर्दण्डिनः भारती मधुररसभरिता, तत्र माधुर्यं राजहंसस्य सुषमावर्णनप्रसङ्गे दृश्यते-

"अनवरतयागदक्षिणारक्षितशिष्टविशिष्टविद्यासम्भारभारमासुरभूसुरनिकरः, विरचिताराातिसन्तापन प्रतापेन सतत्तुलितवियन्मध्यहंसः. राजहंसो नाम घनदपंकन्दर्पसौन्दर्योदयहृद्यनिरवद्यारूयो भूयो बभूव ।"

मालवेश्वरस्य प्रस्थानवर्णनमवलोकयन्तु -

"मालवनाथोऽप्यनेकानेक यूथसनाथो विग्रहः सविग्रह इव साग्रहोऽभिमुखीभूय भूयो निर्जगाम'

राज्ञः राजहंसस्य मालवराजसैन्ययुद्ध प्रक्षस्व -

"राजहंसस्तु प्रशस्तवीतदैन्यसैन्यसमेतस्तीव्रगत्या निर्गत्याधिकरुषं द्विषं रुरोध।"

राजहंसस्य ऐश्वर्यं वर्णयता महाकविना लिख्यते-

"विजितामरपुरे पुष्पपुरे निवसता सानन्तभोगलालिता वसुमती वसुमतीव मगधराजेन यथासुखमन्वभावि।"

राजवाहनः यदा पुष्पोद्भवेन सह उद्याने अवन्तिसुन्दरीं द्रष्टुं गच्छति तदा महाकवेः वर्णनं पश्यन्तु -

"तत्र रतिप्रतिकृतिमवन्तिसुन्दरी द्रष्टुकामः काम इव वसन्तसहायः पुष्पोद्भवसमन्विती राजवाहनस्तु पवनं प्रविश्य, कोकिलकीरालि कुलमधुकराणामालापान्हावं श्राचं किञ्चिद्विकसदिन्दीवरकहारकैरवराजीवराजीकेलिलीलाकलहंससारसकाण्डवचक्रवालकलरवव्याकुल विमलशीतलसलिलललितानि सरांसि दर्श दर्शममन्दलीलया ललनासमीपमवाप।"

संस्कृतस्य महत्वम्

प्रेरणा गौरः

स्नातकतृतीयवर्षः संस्कृतविशेषः

अस्मिन् संसारे अनेकानां भाषाणां प्रयोगो भवति। वस्तुतः भाषा भावानाम् अभिव्यक्तिमात्रिका भवति, किन्तु यदापि यस्यामपि भाषायां अधिकाधिकस्य उपयोगी साहित्यस्य निर्माणं भवति, तदैव तस्याः भाषायाः महत्त्वं वर्धते। एतत् सर्वं संस्कृतस्योपरि अक्षरशः दृश्यते।

इयं भाषा न केवलं भारतवर्षस्य अपितु विश्वस्य प्राचीनतमा भाषा, अतएव अस्याः महत्त्वमतीव वर्तते। अस्यां भाषायां सर्वाधिकस्य वाङ्मयस्य संरचना वर्तते, एषा भाषा अतीव वैज्ञानिका विद्यते। अस्याः पाणिनीयव्याकरणमतीव वैज्ञानिकम् । संस्कारयुक्ता परिष्कृता चेयं भाषा 'संस्कृत' इति कथ्यते। अस्याः अन्यानि नामानि देवभाषा, देववाणी, सुरवनी, गीर्वाग्वाणी च सन्ति। एभिरपि अस्याः भाषायाः महत्वं परिवर्धते।

'विद्वांस हि देवशः' अनेनैव वचनेन भाषा एषा देववाणी अस्ति, कुतः पूर्वकाले एषा भाषा विद्वद्भिः परस्परदैनिकव्यवहारे प्रयुज्यते स्म। विश्वस्य सर्वाधिक प्राचीनतमः ग्रन्थः ऋग्वेदोऽस्यामेव भाषायां निबद्धोऽस्ति। यदि वयं प्राचीनज्ञानविज्ञानसंस्कृतिं प्रति विज्ञासवः भवेम तर्हि संस्कृतभाषा खलु अस्माकं सहाय्या भविष्यति, अतः अस्याः भाषायाः अध्ययनम् अपेक्षितम् अस्ति।

संस्कृतभाषा न केवलं भारतवर्षस्य, अपितु विश्वस्य अनेकानां भाषाणां जननी अस्ति। भारतवर्षः अनेकतायाः उदाहरणरूपः देशो विद्यते, यदि वयं अनेकतायाम् एकतायाः परिदर्शनं कर्तुं वान्छामः यदि वयं भाषागतवैमनस्यं दूरीकर्तुमिच्छामः, तर्हि अस्माभिः भाषा एषा वर्तमानसमये राष्ट्रभाषारूपेण प्रतिष्ठिता कर्तव्या।

वस्तुतः एषा भाषा खलु सर्वेषां भारतीयानां मानसम् एकस्मिन् सूत्रे निबध्नाति । संस्कृतभाषायाः साहित्यभण्डारोऽपि विपुल-ज्ञानविज्ञानसम्मतोऽस्ति। सम्पूर्णवैदिके साहित्ये आध्यात्मिकज्ञानविज्ञानस्य समुचितव्याख्या वर्तते। महाभारत रामायणञ्च द्वे अरुणे भाषायाः महत्त्वपूर्णरत्ने स्तः।

महाकविकालिदास-भवभूति-माघ-हर्ष-चरक-सुश्रुत-कणाद-गौतम-आर्यभट्टादीनाम् कृतिभिः भाषा एषा समृद्धा विद्यते। राजनीतेः अप्रतिमो ग्रन्थः 'कौटिल्यार्थशास्त्रम्, मनुविरचितः 'मनुस्मृतिः' च ग्रन्थौ अस्यामेव भाषायां विरचितौ स्तः। माधुर्यमस्याः भाषायाः महत्त्वपूर्णविशेषता आस्ति, अत एव उच्यते विद्वद्भिः भाषासु मधुरा रम्या दिव्या गीर्वाणवाणी भारती। अनेन विवरणेन स्पष्टमेतत् भवति यत् संस्कृत-भाषायाः अनेकदृष्टिभिः अत्यधिकमहत्त्वमस्ति। अतः अस्माकं भारतवासीनां पुनीतकर्तव्यमेतत् यत् स्व गौरवास्पदमतीतमाभूत्य भविष्यनिर्माणाय संस्कृतस्य प्रचारस्य प्रसारस्य प्रयासो विधेयः।

ये जनाः स्वराष्ट्रस्य गौरवपूर्णमितिहासं स्मरन्ति ते खलु सफलतायाः चरमोत्कर्षं लभन्ते।

भारतीया संस्कृतिः

पूर्णिमा
स्नातकतृतीयवर्षः संस्कृतविशेषः

'सम्' उपसर्गपूर्वकात् 'कृ' धातोः क्तिन् प्रत्ययेन संस्कृतिः शब्दो निष्पद्यते। देशस्य राष्ट्रस्य वा जनैः योऽपि व्यवहारः, आचारो वा क्रियते तत् तस्य देशस्य संस्कृतिः कथ्यते।

अस्माकम् अतीव प्राचीनः राष्ट्रः अस्ति। अतः अस्माकम् संस्कृतिः अपि अतीव प्राचीना अस्ति। संस्कृतिः राष्ट्रस्य आत्मा भवति। भारतीय संस्कृतेः वैशिष्ट्यम् इदमेव यत् अनेकैः वैदेशिकैः अस्याः विनाशाय प्रयत्नः कृतः, किन्तु नैवेषा विनष्टा, अपितु अद्यापि अक्षुण्णा एव दृश्यते।

वस्तुतः अस्यां संस्कृतौ ईदृशानि महत्त्वपूर्णानि तत्त्वानि सन्ति कानिचित्, यैरेषा दीर्घकालः अनन्तरमपि अद्य सर्वोत्कृष्टतां अक्षुण्णतां च भजते। अतः अस्याः संस्कृतसाहित्यस्य अस्माभिः सम्यक् अध्ययनम् अपेक्षितम् वर्तते।

संस्कृतभाषायां निबद्धकाव्यम् भारतीयसंस्कृतेः उदात्तरूपम् प्रख्यापयति। अतः संस्कृतेः तत्त्वानि संस्कृतवाङ्मये निबद्धानि सन्ति। तथैव उच्यते- "संस्कृतिः संस्कृताश्रिता"।

भारतवर्षस्य प्रतिग्रामेऽस्याः स्वरूपम् द्रष्टुं शक्यते। वस्तुतः अद्यापि वयं स्वसंस्कृतिं प्रति महत्गौरवम् अनुभवामः। अस्याः मूलाधाराः ज्ञान-विज्ञान-आगारस्वरूपाः वेदास्सन्ति। वेदाः अखिलविश्वस्य भूमण्डलस्य वा प्राचीनतमानि पुस्तकानि सन्ति। अतो हेतोः संस्कृतिः एषा विश्वसंस्कृतिषु प्राचीनतमा अस्ति। ऋग्वेदे वर्णितम् -"सा प्रथमा संस्कृतिः विश्ववारा"

वस्तुतः इयं संस्कृतिः लोकमंगलकारिणी विश्वबन्धुत्वभावनया च परिपूरिता दृश्यते। अहिंसा अस्याः मूलमन्त्रः एव अस्ति। परोपकारभावनापूरिता च विद्यते। 'कर्मानुसारेणेव पुनर्जन्म भवति" सिद्धान्ते अस्मिन् अस्याः संस्कृतेः महती आस्था दृश्यते। समन्वयभावना अस्याः महत् वैशिष्ट्यम्। विदेशेभ्यः आगताः बहवः जातयः अत्र आगत्य अनया सह सम्मील्य एकीभूताः सञ्जाताः।

वर्णाश्रमव्यवस्था अपि अस्या एका अन्या मौलिकी महत्त्वपूर्णा च विशेषता, अनया व्यवस्थया भारतीयसमाजः चतुर्षु वर्णेषु विभक्तः- ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य-शूद्राः इति। अस्याः व्यवस्थायाः उद्देश्यम् यत् समाजे विविधेषु कार्येषु सौख्यं स्यात्। प्रारम्भे व्यवस्थैषा कर्माधारिता आसीत्, किन्तु अद्यत्वे जन्माधारिता सञ्जाता।

मानवस्य सर्वांगीणत्वेन विकासो भवेत् इति आश्रमव्यवस्थायाः उद्देश्यम् आसीत्। आश्रमव्यवस्थायाम् जीवनचतुर्भागेषु विभक्तं कृतम् आसीत्- ब्रह्मचर्यम् गृहस्थः वानप्रस्थः सन्यासश्च। भारतीया संस्कृतिः कृषिप्रधाना संस्कृतिः, अस्यां संस्कृतौ कृषेः अतीवमहत्त्वम् वर्तते।

अत्र गोः गंगायाश्च वैशिष्टयं महत्त्वम् अपि च परिदृश्यते। अत्र तीर्थानां देवानां च वन्दनं भवति।

अस्यां संस्कृतौ ये जनाः निवसन्ति, ते सर्वे परमं संतोषम् अनुभवन्ति । "वसुधैव कुटुम्बकम्" इति भावनया इयं संस्कृतिः ओतप्रोता च परिदृश्यते। मानवतायाः अत्र पूजा भवति। अस्याः मूलमन्त्रः एषोऽस्ति-

"सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भाग्भवेत् ॥"

परोपकारः

धीरजः झा
स्नातकतृतीयवर्षः संस्कृतविशेषः

संसारेऽस्मिन् परोपकार एव सारः। यदि जगति परोपकारो न स्यात् तदाऽयं संसारो नरकसदृशो भवेत्। परोपकारेणैव दरिद्राणाम्, निर्धनानाम्, निर्बलानाञ्च प्राणिनां प्राणरक्षा भवति। यदि सर्वे जनाः परोपकारस्थानेऽपकारमेव कुर्युस्तदा लोकयात्रा असंभवा स्यात्। परोपकारः नाम परेषां हिताय, सुखाय, कल्याणाय च स्वशक्त्या यत् किञ्चित् कर्तुं शक्यन्ते स एव परोपकारः।

अस्माकं शास्त्रेषु, पुराणेषु, इतिहासेषु च परोपकारस्य अत्यन्तं महत्त्वं प्रतिपादितमस्ति। "परोपकारः पुण्याय, पापाय परपीडनम्" इति वचनं मानवजीवनस्य नैतिकमार्गं निर्देशयति। यः परेषां दुःखं हरति, स एव पुण्यात्मा, यः परेषां पीडां जनयति, स एव पापात्मा इति।

भारतीयसंस्कृतिः सदैव परोपकारप्रधानत्वेन प्रसिद्धा आसीत्। ऋषयः, मुनयः, महात्मानश्च स्वजीवनं लोककल्याणाय अर्पितवन्तः। भगवान् रामः, भगवान् कृष्णः, बुद्धः, महावीरः, स्वामी विवेकानन्दः, महात्मा गांधी च सर्वे परोपकारस्य आदर्शाः आसन्। ते स्वार्थं न पश्यन्ति स्म, केवलं लोकहितं चिन्तयन्ति स्म। तेषां जीवनचरित्रेभ्यः अस्माभिः ज्ञायते यत् परोपकार एव मानवतायाः प्राणः अस्ति।

प्रकृतावपि परोपकारस्य अद्भुतानि उदाहरणानि दृश्यन्ते। वृक्षाः स्वयमुष्णतां सहन्ते, किन्तु अन्येभ्यः छायां, फलानि, पुष्पाणि च ददति। नद्यः पर्वताद् उद्गच्छन्त्यः समुद्रं प्रति वहन्ति, मार्गे सर्वेषां प्राणिनां तृष्णां निवारयन्ति। सूर्यः स्वप्रकाशेन जगत् आलोकयति, वायुः प्राणिनां जीवनाय आवश्यकः भवति। एते सर्वे निरपेक्षतया परोपकारं कुर्वन्ति, न किञ्चित् प्रतिफलं अपेक्षन्ते। मनुष्योपि एतेभ्यः शिक्षां गृह्णीयात्-निःस्वार्थभावेन परहिते प्रवृत्तिः कर्तव्या।

समाजे परोपकारस्य प्रभावः अत्यन्तं व्यापकः अस्ति। यत्र परस्परं साहाय्यभावः, करुणा, दया च विद्यन्ते, तत्र समाजः उन्नतिमधिगच्छति। दानम्, सेवा, शिक्षादानम्, रोगिणां साहाय्यम्, निर्धनानां पोषणम्, पर्यावरणस्य संरक्षणम्—एतानि सर्वाणि परोपकारस्य विविधरूपाणि सन्ति। किञ्च, केवलं धनदानमेव परोपकारः न, अपि तु मधुरवचनम्, समयदानम्, परामर्शदानम् अपि परोपकारस्य एव अंशाः सन्ति।

विद्यार्थिनां जीवनमपि परोपकारेण शोभते। यदि छात्राः परस्परं साहाय्यं कुर्वन्ति, ज्ञानं विभजन्ति, दुर्बलान् उत्थापयन्ति, तर्हि तेषां व्यक्तित्वं उज्ज्वलं भवति। परोपकारेण हृदयस्य विशालता वर्धते, अहंकारः नश्यति, सौहार्दं च प्रवर्धते। अद्यतनयुगे स्वार्थपरता, स्पर्धा, व्यक्तिगतसुखलालसा च अधिका दृश्यते। अस्मिन् काले परोपकारस्य महत्त्वं अधिकं वर्धते। यदि प्रत्येकः मनुष्यः किञ्चिदपि परहितं करोति, तर्हि समाजे शान्तिः, सौहार्दं, समन्वयः च स्थापिताः भविष्यन्ति। राष्ट्रस्य उन्नतिः अपि तदा सम्भवति, यदा नागरिकाः परस्परं साहाय्यभावेन युक्ताः भवन्ति।

अतः निष्कर्षतः वक्तुं शक्यते यत् परोपकारः न केवलं धर्मः, अपितु जीवनस्य श्रेष्ठः मार्गः अस्ति। परोपकारेण एव मनुष्यः सुखं, यशश्च प्राप्नोति। अस्माभिः सर्वैः नित्यं चिन्तनीयम्- "किं मया अद्य परहितं कृतम्?" यदि अस्य प्रश्नस्य उत्तरे सकारात्मकता भवति, तर्हि अस्माकं जीवनं सफलं मन्यते।

अतः सर्वे मिलित्वा एतत् व्रतमाचरामः -

"परहिते सततं यत्नं कुर्मः, परपीडां सर्वथा त्यजामः।"

एवमेव परोपकारस्य पन्थानमनुसृत्य मानवता उज्ज्वला भविष्यति।

वैश्विकोपयोगाय कियती उपयुक्ता संस्कृतभाषा

सुन्दरम्
स्नातकप्रथमवर्षः

न मन्येऽहं यद् काचिदेका भाषा विश्वस्य समेषां जनानां वा भवितुं शक्नोति परं तदपि एकां स्थितिं कल्पयामः यद् यदि विश्वस्य एका एव भाषा भवेत् तदा सा का भवितुमर्हति? अवश्यं संस्कृतभाषा एव तान् सर्वान् गुणान् धारयति ये वैश्विकप्रयोगाय अनिवार्याः। साम्प्रतं तु सर्वेषां मुखाग्रे आङ्ग्लमेव वसते, यस्य न तु हस्तौ स्तः न चैव पादौ । कुत्रचित् उच्चार्यन्ते केचन वर्णाः कुत्रचित् भवन्ति शान्ताः। अस्मत्सदृशाः शुद्धां हिन्दीम् अजानन्तोऽपि जनाः आङ्ग्लं जानन्त्येव। क्षम्यः विषयभ्रष्टोऽहम् । प्रकृतं प्रश्नमनुसरन् पुनर्वदामि यत् संस्कृतभाषा विश्वभाषा भवितुं अत्युपयुक्ता ।

संस्कृतमत्यन्तक्लिष्टम् इत्यहमपि सहमतः । यतोहि कामपि भाषां साधयितुं तस्याः व्याकरणं साधनीयम्। अस्य संस्कृतस्य तु व्याकरणमेव महद्विशालम् । परं विशाले क्लिष्टे च सत्यपि अस्याः संस्कृतभाषायाः सुव्यवस्थितं व्याकरणम् एतस्यै वैश्विकभाषायाः योग्यतां प्रददाति । संस्कृते सर्वेऽपि उपचाराः प्रक्रियाः वा नियमाधारिताः एव भवन्ति, अतः न कस्यचित् दोषस्य सम्भावना देशकालपरिस्थतयः विभिन्नासु भूतास्वपि ।

वैश्विकसम्प्रेषणं तदा विफलं भवति यदा भाषायां शब्दाः सीमिताः भवन्ति। परं संस्कृतभाषायाः अद्वितीयं गुणं नवशब्दनिर्माणसामर्थ्यम् एनाम् अन्याभ्यः भाषाभ्यः विशिष्टां निर्माति। धातुप्रत्ययादीनां समुचितप्रयोगेन सम्यक्व्याकरणिकप्रक्रियाः अनुगच्छन्तः निर्मीयन्ते शब्दाः। यतः नूतनान् अपि शब्दान् वयं निर्मातुं शक्नुमः अथ च विद्यमतां शब्दानाम् अर्थान् अपि विधिवदवगन्तुं शक्नुमः। या भाषा असीमशब्दनिर्माणस्य क्षमतां धारयति सा एव सार्वभौमिकाय उपयोगाय उपयुक्तास्ति ।

अल्पेष्वेव शब्देषु महतीं वार्तां कथितुमपि संस्कृतभाषा समर्था ,अथ च बहुभिः शब्दैरपि एकस्यैव पदार्थस्य वर्णनं इति संस्कृतस्य सौन्दर्यम् ।अन्यमपि एक वैशिष्ट्यमिदं यत् ये च केचन ध्वनयः संस्कृते सन्ति परं केषुचित् अन्येषु क्षेत्रविशेषेषु न सन्ति व्यवहारे, तेषामपि ध्वनीनाम् सम्यगभ्यासाय विधिवद् पाठः प्रदीयते संस्कृते विद्वद्भिः वर्णोच्चारणरिक्षा इति नामधेय : । अथ संस्कृतस्य तथाकथितान् क्लिष्टशब्दान् उच्चारितुम् असमर्धाः सन्तः जनाः उच्चारणविधिं ज्ञात्वा सुस्पष्टं यथारूपम् उच्चारणं कर्तुं शक्नुवन्ति । अतः संस्कृतभाषा वैश्विकभाषा भवितुं काभ्यश्चिदपि अन्याभ्यः भाषाभ्यः अधिका उपयुक्ता अस्ति ।

संस्कृतस्य अपरे लाभाः - संस्कृतस्य साहित्यसागरम् अतीवविशालं वर्तते। रामायणं महाभारतं चेति सदृशानि धार्मिकग्रन्थानाम् अमूल्यरत्नानि संस्कृते एव सन्ति। संस्कृतं विभिन्नानि धर्म-दर्शन-वास्तुशास्त्र-ज्योतिष्विद्या-गणित-विज्ञानेत्याधारितानि मानवजीवनाय उपयुक्तानि शास्त्राणि ग्रथ्नाति। विश्वप्रसिद्धा विश्वप्रसिद्दैश्च सर्वदा प्रशस्ता मानवजीवनोपदेशिका सदसत्कर्मबोधिका महाभारतांशमयी श्रीमद्भगवद्गीता इति ग्रन्थोऽपि संस्कृतभाषायामेव ।

वयं संस्कृतम् अभिविज्ञायैव तेषां सर्वेषां शास्त्राणाम् वास्तविकम् अर्थं ज्ञातुं शक्नुमः।

संस्कृतं व्यावहारिकज्ञानं अपि ददाति । "वसुधैव कटुम्बकम्", "सर्वे भवन्तु सुखिनः", "मातृदेवो भव " इति अनेकेऽपि सद्भावसंस्थापकाः उत्कृष्टाः विचाराः संस्कृतस्य शास्त्रेषु निगदिताः सन्ति। अतः संस्कृतं सदाचारम् अपि शिक्षयति ।

स्वबुद्ध्यानुसाराः मया प्रदर्शिताः केचन संस्कृतभाषायाः वैशिष्ट्यस्य तर्काः तथ्याश्च । परं वस्तुतः संस्कृतं तु इतोऽपि अधिकं विशिष्टम् इतोऽपि अधिकं सुन्दरम्|

संस्कृतम् - समयातीता एका भाषा

अंकुशः
स्नातकप्रथमवर्षः

संस्कृतभाषा समयातीता भाषेति कथ्यते, यतो हि सा केवलं कस्यचित् एकस्य युगस्य समाजस्य वा सीमिता नास्ति। अपि तु सा सहस्राब्देभ्यः मानवज्ञानं, संस्कृतिं, दर्शनं च आत्मनि समाहितां कृतवती अस्ति। एषा भाषा प्राचीनकाले एव न, अपि तु अद्यतनकालेऽपि अत्यन्तमहत्त्वपूर्णा वर्तते।

सामान्यतः जनाः मन्यन्ते यत् संस्कृतं पठित्वा केवलं पण्डितः, शास्त्रज्ञः, पुरोहितः वा भवितुं शक्यते, न तु चिकित्सकः, अभियन्ता वा वैज्ञानिकः। किन्तु एषा धारणा सर्वथा असत्या अस्ति। संस्कृतभाषा पूर्णतया वैज्ञानिकभाषा अस्ति। खगोलशास्त्रम् (Astronomy), गुरुत्वाकर्षणम् (Gravity), आयुर्वेदः, गणितम्, योगः, दर्शनम्, क्वाण्टम्-सिद्धान्ताः इत्यादयः अनेकाः वैचारिक-विज्ञानसम्बद्धाः विषयाः संस्कृतग्रन्थेषु वर्णिताः सन्ति।

एतदपि एकं भ्रान्तिमूलकं मतं यत् संस्कृतं केवलं हिन्दुजनानां भाषास्ति। वस्तुतः संस्कृतं विश्वस्य अनेकेषु राष्ट्रेषु पठ्यते। यथा— यूनाइटेड् किङ्गडम् (UK), संयुक्त-राज्य-अमेरिका (USA), जर्मनी, फ्रान्स्, जापान्, रूस्, ऑस्ट्रेलिया च।

भारतस्य बहिरपि संस्कृतपाठनाय प्रसिद्धाः विश्वविद्यालयाः सन्ति यथा -

- ऑक्सफोर्ड् विश्वविद्यालयः
- केम्ब्रिज् विश्वविद्यालयः
- हार्वर्ड् विश्वविद्यालयः
- कोलम्बिया विश्वविद्यालयः
- हाइडेलबर्ग् विश्वविद्यालयः
- टेक्सास् विश्वविद्यालयः
- ह्यूस्टन विश्वविद्यालयः

एतेषु आधुनिकेषु राष्ट्रेषु एवं विश्वविद्यालयेषु संस्कृतभाषायाः अध्ययनं अध्यापनं च क्रियते, यत् अस्माकं गर्वस्य विषयः अस्ति। अद्यापि अनेकेषु राष्ट्रेषु संस्कृतभाषायाः विषये अनुसन्धानं प्रचलति।

भारतेतरदेशीयाः वैज्ञानिकाः संस्कृतविषये अनुसन्धानं कुर्वन्तः सन्ति -

- सर् विलियम् जोन्स् (UK) — संस्कृत-, ग्रीक्- लैटिन्-भाषयोः तुलनात्मकभाषाविज्ञानस्य शोधः।
- फ्रिट्ज् स्टाल् (नेदरलैण्ड्स्) — संस्कृतव्याकरणम्-वैदिकयज्ञ-कर्मकाण्डानां च विषये गहनाध्ययनम्।
- नोम् चोम्स्की (अमेरिका) — आधुनिकभाषाविज्ञाने पाणिनीय-संस्कृतव्याकरणात् प्रेरिताः सिद्धान्ताः।
- रिक् ब्रिग्स् (NASA, अमेरिका) - संस्कृतव्याकरणस्य कृत्रिमबुद्धिमत्ता (AI) तथा ज्ञानप्रस्तुतीकरणे उपयोगः।
- मैक्स् मूलर् (जर्मनी) — वेदानां उपनिषदां च सम्पादनम्, अनुवादः तथा दार्शनिक-अध्ययनम्।

परमाणुबमस्य जनकः रॉबर्ट् ओपेनहाइमर् हार्वर्ड् विश्वविद्यालये संस्कृतम् अधीतवान् आसीत्। सः भगवद्गीतां मूलसंस्कृते पठितवान् तथा तां जीवनदर्शनरूपेण स्वीकरोत्। १६ जुलै १९४५ तमे दिने प्रथमः परमाणुविस्फोटः अभवत्। तदा सः संस्कृतस्य प्रसिद्धं श्लोकं स्मृतवान्-

"कालोऽस्मि लोकक्षयकृत् प्रवृद्धः।"

अर्थात् अहं कालः अस्मि, संसारस्य नाशकर्ता। अनेन श्लोकेन सः अत्यन्तं प्रभावितः अभवत्।

अल्पाः जनाः जानन्ति यत् निकोला टेस्ला विद्युत्-विज्ञानस्य महान् वैज्ञानिकः आसीत्। सः स्वामी विवेकानन्देन सह सम्पर्केण संस्कृतशब्दानां- यथा प्राणः, आकाशः, तत्त्वार्थं च अवगच्छत्। भारतीयदर्शनस्य प्रभावः तस्य कार्येषु स्पष्टं दृश्यते।

अतः स्पष्टं यत् संस्कृतभाषा केवलं प्राचीना धार्मिका भाषा न, अपि तु वैज्ञानिका, तर्कसंगता, वैश्विकमहत्त्वपूर्णा च भाषा अस्ति। आधुनिकविज्ञानम्, भाषाविज्ञानम्, दर्शनम्, कृत्रिमबुद्धिमत्ता (AI), संगणकविज्ञानम् इत्यादिषु क्षेत्रेषु संस्कृतभाषायाः संरचना व्याकरणं च प्रेरणास्रोतः भवति। संस्कृतं अस्माकं सांस्कृतिकविरासतेन सह वर्तमानस्य भविष्यस्य च अत्यन्ता महत्त्वपूर्णा भाषा अस्ति। अतः तस्याः संरक्षणं, अध्ययनं च अस्माभिः सर्वैः कर्तव्यम्।

मध्यकालीनसंगीतस्य विकासः

मीनू
स्नातकद्वितीयवर्षः संस्कृतविशेषः

मध्यकाले भारतीयसंगीतस्य विकासः विशेषरूपेण अभवत्। इस्लामधर्मे संगीतं न तु शुभं न च अशुभं मन्यते स्म, किन्तु मूर्तिपूजायाः विरोधः प्रबलः आसीत्। अतः तत्र मनोरञ्जनरूपेण संगीतस्य विशेषं प्रोत्साहनं न अभवत्। तथापि भारतदेशे मुस्लिमशासकैः अपि संगीतं प्रोत्साहितम्। मुगलशासकानां कालस्य विशेषमहत्त्वं अस्ति। मुगलशासकैः दरबारेषु संगीतस्य संरक्षणं कृतम्। विशेषतः अकबरस्य दरबारे प्रसिद्धगायकः तानसेनः आसीत्। तानसेनः स्वयं महान् संगीतज्ञः आसीत्। सः भारतीयसंगीतस्य महान् प्रशंसकः आसीत्। तेन भारतीय-ईरानी परम्पराणां संयोजनं कृत्वा अनेकानां नवीनरागाणां विकासः कृतः। तस्य प्रमुखाः रागाः-दरबारी, मियाँकी-मल्हार, सरस्वती इत्यादयः सन्ति।

दिल्लीसल्तनत्काले फिरोजशाह तुगलकः रूढ़िवादी सुलतानः आसीत्, तथापि सः संगीतविषये रुचिं धारयति स्म। तेन संगीतस्य संरक्षणं कृतम् तथा संगीतज्ञाः सम्मानिताः अभवन्।

मध्यकाले संगीतविकासे भक्तिपरम्परायाः अपि महत्वपूर्णं योगदानं अस्ति। जयदेवः, विद्यापतिः, सूरदासः, मीराबाई च स्वस्वकाव्येषु संगीतस्य उपयोगं कृतवन्तः। भक्तिकालीनकविभिः गीत-भजनरूपेण संगीतं जनसामान्येषु लोकप्रियं कृतम्।

एवं मध्यकाले राजनीतिक-सांस्कृतिक-धार्मिकपरिवर्तनैः सह संगीतस्य व्यापकः विकासः अभवत्, यः भारतीयसंगीतपरम्परायाः आधारः अभवत्।

चन्दनस्य मूल्यम्

सिद्धार्थ त्रिपाठी
स्नातकद्वितीयवर्षः संस्कृतविशेषः

एकस्मिन् लघु-गृहे, एकस्य निर्धन-कृषकस्य जीवने, एका प्रियंवदा कन्या अजायत। 'इयं कन्या अस्ति' इति वदन्ती वृद्धा धात्री नवजातं शिशुं पितुः अङ्के समर्पितवती। 'कन्यायाः पितुः भारः पाषाणवत् गुरुः भवति' इति ग्रामवृद्धाः अवदन्। अत्र चन्दनवृक्षं रोपय, यदा सः वृक्षः वर्धिष्यते, तदा द्रक्ष्यसि यत् त्वं किं किं रक्षितुं शक्नोषि। बीजं पादपे परिवर्तितम्, एका लघुकन्या च निश्चिन्ततया तं परितः अधावत्। मधुरः गन्धः अङ्गने व्याप्तः अभवत्, मधुरं हास्यं च वायौ प्रतिध्वनितम्। चन्दनवृक्षस्य छायायाम्, एकस्याः पुत्र्याः स्पर्शः पितुः दिनभरस्य श्रान्तिम् अपाहरत्। पादपः स्तम्भः अभवत्, निर्धनकृषकस्य भवनं वास्तविकं गृहं जातम्। दीर्घकालात् परं, स्तम्भः वृक्षरूपेण पुष्पितः, सा कन्या अपि युवती अभवत्।

विवाहस्य प्रस्तावः आगतः, सा शीघ्रं वधूः भविष्यति... किन्तु एकः पिता अतिव्यय-साध्यं विवाहं कथं सोढुं शक्नुयात्?

पञ्चाशत्-सहस्र-मुद्राभ्यः चन्दनवृक्षेण सुन्दरतमायै वध्वै पितृ-त्यागः कृतः। विवाहः अतीव शोभनः अभवत्। "प्रसन्नः भव! तव हृदयात् भारः अपगतः!" इति पिता अशृणोत्।

ततः सर्वेभ्यः मुखं परावर्त्य, सः नीरवम् अश्रूणि अमुञ्चत्। अग्रे प्रातःकाले, शून्यम् अङ्गनं विलपति। तस्य 'भाररहितं' वक्षः पृच्छति- "चन्दनस्य मूल्यं किम् अस्ति? कस्यचिद् हृदयस्य भारः कः अस्ति?"

प्राचीनभारतीयसंस्कृतसाहित्ये आधुनिकविज्ञाने च सामञ्जस्यं तथा संस्कृते नवाचारः

भूमिः

स्नातकद्वितीयवर्षः संस्कृतविशेषः

प्राचीनभारतीयसंस्कृतसाहित्यं मानवसभ्यतायाः महान् निधिः अस्ति। वेदाः, उपनिषदः, महाभारतम्, रामायणम्, आयुर्वेदः, ज्योतिषम्, गणितम्, व्याकरणम् इत्यादयः ग्रन्थाः न केवलं आध्यात्मिकं चिन्तनं प्रदर्शयन्ति, अपि तु वैज्ञानिकदृष्ट्या अपि अत्यन्तं समृद्धाः सन्ति। आयुर्वेदे शरीररचनाविज्ञानं, औषधिविज्ञानं च विस्तरेण निरूपितम्। सुश्रुतसंहितायां शल्यचिकित्सायाः सूक्ष्मविवरणं दृश्यते, यत् आधुनिकचिकित्साशास्त्रे अपि आदर्शरूपेण स्वीक्रियते।

आधुनिकविज्ञानं यदा तन्त्रज्ञानं, संगणकविज्ञानं, अंतरिक्षविज्ञानं च विकसितं करोति, तदा संस्कृतसाहित्ये निहिताः सिद्धान्ताः तेषां मूलरूपेण प्रकाशन्ते। उदाहरणार्थं, पाणिनीयव्याकरणस्य सूत्रपद्धतिः संगणकप्रोग्रामिंगस्य सूत्रविधानस्य समाना अस्ति। योगदर्शनं मनोविज्ञानस्य तथा स्वास्थ्यविज्ञानस्य आधुनिकान् सिद्धान्तान् सम्यगनुगच्छति।

अद्यतनकाले संस्कृते नवाचारः अत्यावश्यकः अस्ति। आधुनिकविज्ञानस्य शब्दावली संस्कृते अनुवाद्य नूतनपदानि निर्माणीयानि सन्ति, येन संस्कृतभाषा जीवितस्वरूपेण विकसितुं शक्नोति। विश्वविद्यालयेषु, अनुसन्धानसंस्थासु, आन्तर्जालमाध्यमेषु च संस्कृतभाषायाः प्रयोगः वर्धमानः अस्ति। डिजिटलसंस्कृते, कृत्रिमबुद्धिमत्ता, जैवप्रौद्योगिकी इत्यादिषु विषयेषु संस्कृताधारितग्रन्थनिर्माणं नवाचारस्य उत्तमं उदाहरणम् अस्ति।

अतः प्राचीनभारतीयसंस्कृतसाहित्यं च आधुनिकविज्ञानं च परस्परं पूरकौ स्तः। एतयोः सामञ्जस्येन न केवलं संस्कृतभाषायाः पुनरुत्थानं सम्भवति, अपि तु सम्पूर्णमानवसमाजस्य बौद्धिकविकासः अपि साध्यते।

युवा-शक्तेः महत्वम्

खुशी रावतः

स्नातकद्वितीयवर्षः संस्कृतविशेषः

युवा-शक्तिः राष्ट्रस्य महान् आधारः अस्ति। यत्र युवाः जागरूकाः, परिश्रमिणः, सज्जनाश्च भवन्ति, तत्र राष्ट्रं सुदृढं भवति। युवानः राष्ट्रस्य भविष्याः सन्ति। तेषां चिन्तनम्, तेषां कर्म, तेषां संकल्पः च देशस्य दिशं निर्धारयति।

अद्यतनकाले युवानः विविधेषु क्षेत्रेषु स्वकौशलम् प्रदर्शयन्ति—विज्ञानक्षेत्रे, क्रीडाक्षेत्रे, शिक्षाक्षेत्रे, कलाक्षेत्रे च। ते केवलं स्वस्य हिताय न, अपितु समाजस्य उन्नत्यै अपि कार्यं कुर्वन्ति। यदि युवानः सद्मार्गे चलन्ति, तर्हि समाजः अपि प्रगत्याः मार्गं गच्छति।

शिक्षा युवा-जीवनस्य मूलम् अस्ति। शिक्षया एव ज्ञानं, विवेकः, नैतिकता च विकसिताः भवन्ति। शिक्षितः युवा समाजे परिवर्तनं कर्तुं समर्थः भवति। अतः सर्वे युवानः स्वशक्तिं ज्ञात्वा, आत्मविश्वासेन सह अग्रे गच्छेयुः।

अनुशासनम् अपि युवा-जीवने अत्यन्तम् आवश्यकम् अस्ति। अनुशासनहीनः युवा स्वजीवनं राष्ट्रस्य जीवनं च नाशयितुं शक्नोति। परन्तु अनुशासितः, परिश्रमी, दृढसंकल्पयुक्तः युवा राष्ट्रस्य गौरवं वर्धयति।

अतः वयं सर्वे युवानः सत्यं, परिश्रमं, सेवा-भावं च स्वीकुर्मः। राष्ट्रनिर्माणे स्वकर्तव्यं पालनं कुर्मः। एवं युवा-शक्तिः राष्ट्रं उज्ज्वलभविष्यं प्रति नयति। इति।

नवीन-शिक्षा-नीतेः (NEP-2020) प्रमुख-प्रावधानानि च चुनौतयः

राखी

स्नातकद्वितीयवर्षः संस्कृतविशेषः

एतस्य निमित्तेन एकस्य स्वतन्त्रस्य राष्ट्रीय-अनुसन्धान-संस्थायाः स्थापना करिष्यते तथा उत्तम-प्रदर्शनं कुर्वताम् विश्वविद्यालयानां विदेशेषु अपि परिसर-स्थापनायाः दिशा वर्धयिष्यते। प्रमुख-वैश्विक-विश्वविद्यालयानां भारतमध्ये संचालनाय अनुमतिः अपि दास्यते।

सर्वासु विद्यालयेषु उच्च-शिक्षण-संस्थासु च व्यावसायिक-शिक्षया सह डिजिटल-शिक्षायाः अपि बलं दास्यते।

एवं वक्तुं उचितम् अस्ति यत् नूतन-शिक्षा-नीतिः SDG-4 लक्ष्य-प्राप्त्यर्थं नवाचारं प्रोत्साहयिष्यति। किन्तु अस्य क्रियान्वयनकाले काःचित् चुनौतयः अपि सन्ति, यथा—

- वित्तीय-संसाधनानां अभावः।
- अभिभावकानां शिक्षकानां च दृष्टिकोणे परिवर्तनं करणं चुनौतीपूर्णम्।
- अस्यां नीतौ त्रिभाषा-सूत्रे बलं दत्तम् अस्ति, परन्तु बहुभाषा-शिक्षण-पद्धतेः प्रवर्तनार्थं प्रशिक्षित-शिक्षकानां उपलब्धता सुनिश्चितं करणं कठिनम्।
- भारतमध्ये भ्रष्टाचारात् तथा कुशासनात् कारणात् शिक्षायाः प्रति उदासीनता तथा अधिगम-दरिद्रता वर्धिता।

NEP-2020 इत्यस्य प्रावधानाः-

- एषा प्रारम्भिक-बाल्यावस्था-देखभाल-शिक्षा-सम्बद्ध-शिक्षा-नीतिः प्रवर्तिता अस्ति, यस्याः अन्तर्गतं 5+3+3+4 इति संरचना अस्ति। अस्याः अन्तर्गतं त्रीणि वर्षाणि बालकानां पूर्व-शिक्षायां समाविष्टानि भवन्ति।
- कक्षा-5 पर्यन्तं मातृभाषायां शिक्षायाः बलं दत्तम् अस्ति। यदि सम्भवम् अस्ति तर्हि कक्षा-8 पर्यन्तं शिक्षायाः माध्यमं मातृभाषा भवेत् इति अपि बलं दत्तम् अस्ति।
- शिक्षक-प्रशिक्षण-प्रबन्धनार्थं वर्तमान- B.Ed कार्यक्रमस्य स्थाने चतुर्वर्षीयः एकीकृतः B.Ed कार्यक्रमः प्रस्तावितः अस्ति।
- उच्च-शिक्षायां नामांकन-अनुपात-वृद्ध्यर्थं तथा उच्च-शिक्षा-प्राप्त्यर्थं संस्थानैः ऑनलाइन-कार्यक्रमानां तथा मुक्त-दूर-शिक्षण-कार्यक्रमानां सञ्चालनस्य विकल्पः स्वीक्रियते।
- सर्वाः उच्च-शिक्षण-संस्थाः त्रिभागेषु विभज्यन्ते—प्रथमः वर्गः शोध-विश्वविद्यालयः, द्वितीयः वर्गः शिक्षण-विश्वविद्यालयः, तृतीयः वर्गः डिग्री-प्रदान-कर्तृ महाविद्यालयाः। एते सर्वे संस्थानाः शनैः शनैः वित्तीय-स्वतन्त्रतां प्राप्स्यन्ति।

आदर्शः छात्रः

नंदिनी मिश्रा

स्नातकद्वितीयवर्षः संस्कृतविशेषः

मानव-जीवनं संसारे सर्वतो बहुमूल्यमस्ति। अस्मिन् जीवने नरः साक्षात् परं सुखं प्राप्नोति । मानवस्य जीवनस्य चत्वारो भागाः सन्ति-ब्रह्मचर्यं, गार्हस्थ्यं, वानप्रस्थं संन्यासश्च । ब्रह्मचर्यस्य द्वितीयं नाम छात्र-जीवनमस्ति । छात्रस्तु मानवः सदैव भवति, यतः स प्रतिक्षणं सदैव नूतनां शिक्षां शिक्षते, परं छात्रस्य विद्याध्ययनकालः वस्तुतः एकः विशिष्टः कालो भवति ।

आदर्शः छात्रः सः, यः सदैव गुरून् प्रणमति, मातरं पितरं पूर्वजाँश्चापि प्रणमति । आदर्शछात्रे ये गुणाः अनिवार्याः ते इमे सन्तिः -

"काकचेष्टा बकध्यानं शुनो निद्रा तथैव च । अल्पाहारी गृहत्यागी विद्यार्थी पंच लक्षणम्"

शिक्षा तथा कृत्रिम बुद्धिमत्ता

लकी (स्नातकद्वितीयवर्षः संस्कृतविशेषः)

शिक्षा क्षेत्रे कृत्रिमबुद्धिमत्तायाः समावेशनं बलं प्राप्नोति, यतः -

- एतत् वंचितवर्गपर्यन्तं शिक्षायाः पहुँचं सुलभां करिष्यति तथा गुणवत्तापूर्ण शिक्षायाः समान अवसरं सुनिश्चितं करिष्यति।
- एतत् क्षेत्रीय विषमतां न्यूनां करिष्यति, यतः विविध भौगोलिक प्रदेशेषु A.I. द्वारा शिक्षायाः प्रसारः सुलभः भविष्यति।
- शिक्षकाणां कृते उत्तमं व्यावसायिकं वातावरणं निर्मास्यति, यतः A.I. विद्यार्थिनां जिज्ञासानां समाधानं कृत्वा शिक्षकस्य सहायकः अथवा आभासी शिक्षकस्य भूमिकां निर्वहिष्यति।
- एतत् प्रत्येकस्य विद्यार्थिनः क्षमतानां उत्तमं मूल्यांकनं करिष्यति तथा छात्रेभ्यः शिक्षकाभ्यां च पृथक्-पृथक् प्रतिपुष्टिं (feedback) दातुं सहायकं भविष्यति।
- अनेन समाजे आलोचनात्मकदृष्टेः विकासः भविष्यति तथा पूर्वाग्रहाः दूरं कर्तुं शक्यन्ते।

परन्तु A.I. तथा शिक्षायाः मध्ये समन्वये केचन समस्याः अपि सन्ति—

- शिक्षा क्षेत्रे A.I. अपनायनाय शिक्षकाणां निरन्तरं कौशलविकासः आवश्यकः भविष्यति।
- संसाधनानां तथा अवसंरचनायाः अपर्याप्तविकासस्य कारणात् सर्वेषु क्षेत्रेषु अस्य उपयोगः कठिनः अस्ति, यथा- जनसंख्यायाः एकः भागः अद्यापि अन्तर्जालस्य उपयोगं न करोति।
- निजतायाः संरक्षणं कठिनं भवति, यतः कदाचित् A.I. हैक् कृत्वा केचन विद्यार्थिनां स्वडाटां दुरुपयोगं कर्तुं शक्नुवन्ति, येन तेषां व्यक्तिगतजीवनं प्रभावितं भवति।
- A.I. विकासस्य, संचालनस्य तथा उपयोगस्य कृते यत् मानवीयसंसाधनं आवश्यकं भवति, तत् सर्वत्र उपलब्धं नास्ति।
- विकसितदेशाः यदि गरीबदेशेभ्यः डिजिटल् अवसंरचनां प्रदास्यन्ति, तर्हि ते उत्पादितडेटायाः उपरि नियन्त्रणं स्थापयितुं प्रयत्नं करिष्यन्ति, येन राष्ट्रीयसार्वभौमत्वं रक्षितुं कठिनं भविष्यति।

अतः इति कथ्यते यत् निजतायाः अधिकारं तथा साइबरसुरक्षां सुदृढीकर्तुं वैश्विकस्तरे शासनव्यवस्थायाः प्रोत्साहनं कर्तव्यम्। तेन सह शिक्षायां कृत्रिमबुद्धिमत्तायाः समावेशनं सम्यक् प्रकारेण कर्तव्यम्।

संशयात्मा विनश्यति

राकेशः कुमारः मिश्रा (स्नातकचतुर्थवर्षः संस्कृतविशेषः)

प्रत्येकमपि मनुजः कामयते साफल्यं स्व-स्व-कर्मणि । लक्ष्यमुद्दिश्यैव स कार्येषु प्रवर्तते तत्र च सफलो भवितुमिच्छति । सर्वेऽप्युद्योगशीलाः पुरुषाः स्व-स्व-व्यवसाये सफलतामेव प्राप्तुमिच्छन्ति । परन्तु उद्योगिनोऽपि द्विधा भवन्ति-संशयात्मानो निश्चयात्मानश्च । संशयात्मा पुरुषः पदे पदे संशेते। तस्य स्वकीय-सामर्थ्य विश्वासो न भवति । प्रत्येकस्यापि कार्यस्यारम्भात्पूर्वं ते विचारयन्ति कार्यसामग्र्याः स्वसामर्थ्यस्य, कार्यफलस्य च विषये । "किमहमिदं कर्तुं शक्नोमि? कृत्वाऽपि किं सफलो भवेयम्? यदि मध्ये केचन विघ्नाः आपतिष्यन्ति तदा किं करिष्यामि? को मे सहायको भविष्यति? नावगच्छामि किं मया कर्त्तव्यं, किं च न कर्तव्यम्" इत्यादयः सन्देहास्तस्य चित्तमाकुलीकुर्वन्ति । एतादृशाः संशयात्मानः पुरुषाः प्रायो निजकार्येषु असफला एव भवन्ति।

"प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचैः, प्रारभ्य विघ्नविहता विरमन्ति मध्याः ।
विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः प्रारभ्य चोत्तमजना न परित्यजन्ति ।।"

रसायनशास्त्रम्: भारतस्य प्राचीनरसायनविज्ञानस्य परम्परा

पीयूष: पाल:
स्नातकद्वितीयवर्ष: संस्कृतविशेष:

रसायनशास्त्रम् भारतस्य प्राचीनं रसायनविज्ञानम् अस्ति। अस्य विकासः एकेन आचार्येण न कृतः, अपि तु आचार्यनागार्जुनः, चरकः, सुश्रुतः, वाग्भटः इत्यादयः विद्वांसः अस्मिन् क्षेत्रे महत्त्वपूर्णं योगदानं दत्तवन्तः। रसरत्नाकरः, रसार्णवः, रसरत्नसमुच्चयः, रसेंद्रचूडामणिः इत्यादिषु ग्रन्थेषु रसायनशास्त्रस्य ज्ञानं वर्णितम् अस्ति।

रसायन इति शब्दः रस (पारदः – Mercury) तथा आयन (मार्गः / प्रक्रिया) इत्येतयोः संयोगेन निर्मितः। रसायनशास्त्रम् शोधनम् (Purification), मारणम् (Calcination) इत्यादि प्रक्रियाभिः पदार्थ-परिवर्तनस्य विज्ञानम् अस्ति। अस्य लक्ष्यं आरोग्यं, दीर्घायुः, बलं, तेजः च अस्ति।

"दीर्घमायुः स्मृतिं मेधामारोग्यं तरुणं वयः। प्रभावर्णस्वरौदार्यं देहेन्द्रियबलप्रदम्॥" (चरकसंहिता)

वेदेषु सुवर्णम् (Gold), ताम्रम् (Copper), अयः (Iron) इत्यादीनां धातूनां उल्लेखः दृश्यते। रसायनशास्त्रे धातवः अपरिपक्वतया न प्रयुज्यन्ते। ताः शोधन-मारण-प्रक्रियाभिः औषधियोग्याः क्रियन्ते। लोहः (Iron) पुनःपुनः तापनेन तथा औषधद्रवेषु निमज्जनेन लोहभस्म (Iron oxide preparation) रूपेण परिणम्यते। ताम्रः (Copper) नियंत्रिततापनेन आक्सीकरणेन (Oxidation) ताम्रभस्म (Copper-based compound) रूपेण प्रयुज्यते।

रसायनशास्त्रे पारदः (Mercury) अत्यन्तं महत्त्वपूर्णः मन्यते— पारदो हि रसायनानां प्राणः (रसार्णवः)। शोधितः पारदः गन्धकेन (Sulphur) सह संयोज्य कज्जली (Mercury sulphide) इति स्थिरसंयोगं निर्माति। रसायनशास्त्रम् केवलं पदार्थपरिवर्तनस्य विज्ञानं न, अपि तु जीवनपरिवर्तनस्य दर्शनम् अपि अस्ति। अत्र मानवदेहः एव प्रयोगशाला इव मन्यते।

रसायनशास्त्रे वर्णिताः रासायनिकप्रक्रियाः -

१. कज्जली-निर्माणम्

संस्कृत-विवरणम्: शोधितः पारदः शोधितेन गन्धकेन सह सम्यक् मर्द्यते। तदा कृष्णवर्णा कज्जली जायते। द्रव्याणिः -

पारदः (Mercury – Hg)
गन्धकः (Sulphur – S)

आधुनिक-प्रतिक्रियाः

$Hg + S \rightarrow HgS$

(Mercury Sulphide)

२. लोहभस्म-निर्माणम्

संस्कृत-विवरणम्:

शोधितं लोहं पुनःपुनः अग्निना दग्धं द्रवद्रव्येषु निमज्ज्यते। अन्ते सूक्ष्मा लोहभस्मा जायते।

द्रव्यम् - लोहः (Iron – Fe)

आधुनिक-प्रतिक्रियाः-

$4Fe + 3O_2 \rightarrow 2Fe_2O_3$

(Iron Oxide)

३. ताम्रभस्म-निर्माणम्

संस्कृत-विवरणम् - शोधितं ताम्रं पुटे पाच्यते, तेन ताम्रभस्मा सिद्ध्यति।

द्रव्यम् - ताम्रम् (Copper – Cu)

आधुनिक-प्रतिक्रियाः -

$2Cu + O_2 \rightarrow 2CuO$

(Copper Oxide)

४. नागभस्म-निर्माणम्

संस्कृत-विवरणम्: - शोधितः नागः गन्धकेन सह पुटपाकेन भस्मत्वं नीयते। द्रव्याणि -

नागः (Lead – Pb)
गन्धकः (Sulphur – S)

आधुनिक-प्रतिक्रियाः -

$Pb + S \rightarrow PbS$

(Lead Sulphide)

५. वङ्गभस्म-निर्माणम्

संस्कृत-विवरणम् - शोधितं वङ्गं अग्निना ताप्यते, तेन भस्मरूपे परिणमति। द्रव्यम्-

वङ्गः (Tin – Sn)

आधुनिक-प्रतिक्रियाः -

$Sn + O_2 \rightarrow SnO_2$

(Tin Oxide)

६. यशदभस्म-निर्माणम्

संस्कृत-विवरणम् - शोधितः यशदः गन्धकेन सह संयोज्य पुटे पाच्यते।

द्रव्याणि - यशदः (Zinc – Zn)

गन्धकः (Sulphur – S)

आधुनिक-प्रतिक्रियाः -

$Zn + S \rightarrow ZnS$

(Zinc Sulphide)

७. शङ्खभस्म-प्रक्रिया (Lime Water Reaction – Śankha Bhasma)

रसायन-विवरणम् - शङ्खः अग्निना दग्धः भवति। ततः जलेन संयोज्य क्षाररूपं धारयति।

द्रव्यम् - शङ्खः (Calcium Carbonate – $CaCO_2$)

आधुनिक-प्रतिक्रियाः -

$CaCO_2 \rightarrow CaO + CO_2$

$CaO + H_2O \rightarrow Ca(OH)_2$

अर्थः - अत्र उष्णता-अपघटनम् (Thermal Decomposition) तथा

जलसंयोगः (Hydration Reaction) दृश्यते।

८. टंकण-शोधनम्

संस्कृत-विवरणम् - टंकणः अग्निना ताप्यते, तस्य जलांशः नश्यति। द्रव्यम् -

टंकणः (Borax – $Na_2B_4O_7{\cdot}10H_2O$)

आधुनिक-प्रतिक्रियाः -

$Na_2B_4O_7{\cdot}10H_2O \rightarrow Na_2B_4O_7 + 10H_2O$

९. नवसार-निर्माणम्

संस्कृत-विवरणम् - अम्लस्य क्षारस्य च संयोगेन नवसारः उत्पद्यते। द्रव्यम्-

नवसारः (Ammonium Chloride – NH_2Cl)

आधुनिक-प्रतिक्रियाः -

$NH_3 + HCl \rightarrow NH_4Cl$

१०. मनःशिला-प्रक्रिया

संस्कृत-विवरणम् - मनःशिला अग्निना पाच्यते, तेन तस्य गुणाः परिवर्तन्ते। द्रव्यम् -

मनःशिला (Realgar – As_4S_4)

आधुनिक-दृष्टिः - उष्णतया अपघटन-प्रक्रिया (Thermal Decomposition)

११. मनःशिला-परिवर्तनम् (Manahśilā – Realgar Transformation)

रसायन-विवरणम्- मनःशिलां अग्निना पाचयित्वा तस्य गुणान् परिवर्तयेत्। उष्णतया तस्य स्वरूपे परिवर्तनं भवति। द्रव्यम् -

मनःशिला (Realgar – As_4S_4)

आधुनिक-रासायनिक-प्रतिक्रिया (लगभग):

$As_4S_4 + O_2 \rightarrow As_2O_3 + SO_2$

(Heating पर होने वाला अपघटन)

अर्थः - एषा प्रक्रिया उष्णता-अपघटनम् (Thermal Decomposition) दर्शयति।

१२. गन्धक-शोधनम् (Gandhaka Śodhana – Sulphur Purification)

रसायन-विवरणम् - गन्धकः क्षीरे द्राव्यः भवति। एतेन तस्य अशुद्धयः नश्यन्ति, सः शोधितः भवति। द्रव्याणि -

गन्धकः (Sulphur – S)

क्षीरम् (Milk)

आधुनिकव्याख्या- अयं भौतिकशोधनप्रक्रिया अस्ति, यत्र अम्लीय-अशुद्धीनां निवारणं भवति। अर्थः - एषा द्रावक-शोधन-प्रक्रिया (Solvent Purification) इति ज्ञायते।

१४. टंकण-प्रक्रिया (Tankana – Borax Processing)

रसायनविवरणम् - टंकणं अग्निना ताप्यते। तस्य जलांशः नश्यति, शुद्धं द्रव्यं शिष्यते। द्रव्यम्-

टंकणः (Borax – $Na_2B_4O_7{+}10H_2O$)

आधुनिक-रासायनिक-प्रतिक्रिया - $Na_2B_4O_7{+}10H_2O \rightarrow Na_2B_4O_7{+}10H_2O$

अर्थः- एषा निर्जलीकरण-प्रक्रिया (Dehydration Reaction) अस्ति।

१५. नवसार-निर्माणम् (Navasāra – Ammonium Chloride Formation)

रसायनविवरणम्- क्षारस्य अम्लस्य च संयोगेन नवसारः उत्पद्यते। द्रव्यम् -

नवसारः (Ammonium Chloride – NH_4Cl)

आधुनिकरासायनिकप्रतिक्रिया - $NH_3 + HCl \rightarrow NH_4Cl$ (Ammonia + Hydrochloric Acid)

अर्थः - एषा अम्लक्षारप्रतिक्रिया (Acid–Base Reaction) इति स्पष्टा।

निष्कर्षः - एतासु प्रक्रियासु स्पष्टं दृश्यते यत् प्राचीन-भारतीय-रसायनशास्त्रे उष्णता-अपघटनम्, संयोजन-प्रतिक्रिया, ऑक्सीकरणम्, निर्जलीकरणम्, अम्ल-क्षार-प्रतिक्रिया

इत्यादयः रासायनिक-सिद्धान्ताः प्रयोगात्मक-रूपे विकसिताः आसन्। रसायनशास्त्रं प्राचीनभारते केवलं औषधनिर्माणाय न, अपि तु शुद्ध-रसायनविज्ञानस्य आधारः आसीत्।

जिज्ञासा

मनीषा कुमारी
स्नातकतृतीयवर्षः संस्कृतविशेषः

यदि त्वं जीवितुम् इच्छसि किं कर्तव्यम्?
तर्हि त्वं जीवनेन सह संघर्षं कुरु।
यदि त्वं त्यक्तुम् इच्छसि किं कर्तव्यम्?
तर्हि त्यज दुर्गुणम्।
यदि त्वं वक्तुम् इच्छसि किं कर्तव्यम्?
तर्हि सत्यं वद।
यदि त्वं किमपि ग्रहीतुम् इच्छसि?
तर्हि आशीर्वादं गृह्णातु।
यदि त्वं किमपि दातुम् इच्छसि?
तर्हि ज्ञानदानं कुरु।
यदि त्वं किमपि कर्तुम् इच्छसि?
तर्हि उद्यमं कुरु।

मार्गस्थ-बाल-कारुण्यम्

अंकुशः कुमारः (स्नातकतृतीयवर्षः संस्कृतविशेषः)

मार्गप्रान्ते रजसि मलिनाः क्षीणपुण्याः कुमाराः,
नग्नैः पादैः पथिक-हृदयं भेदयन्तो भ्रमन्ति।
शून्ये नेत्रे गगन-विपुलं दृश्यते दैन्य-जालं,
हस्त-न्यस्ता क्षुधित-जठरे दुःख-गाथा निबद्धा ॥ १ ॥

भावार्थः - मार्ग के किनारे धूल से मलिन, जैसे कोई पुण्य क्षीण हो गया हो, वे बालक नंगे पैरों से राहगीरों के हृदय को बींधते हुए घूमते हैं। उनकी शून्य आँखों में आकाश सा फैला हुआ दैन्य (गरीबी) दिखता है और उनकी हथेलियों पर क्षुधा (भूख) की गाथा लिखी है।

हस्तौ स्वल्पौ व्यसन-ततिरेवास्ति शैलोपमाना,
भित्तिः क्लृप्ता परित-मभितः क्षुत्-पिपासा-मयीव।
खण्डे भक्ष्ये कलह-निरतं बाल्य-मेतद् विदीर्णं,
शब्दैः क्रूरैः प्रतिपदमहो भज्यते स्वप्न-वृन्दम् ॥ २ ॥

भावार्थः - हाथ छोटे हैं पर विपत्तियों का समूह पर्वत के समान विशाल है। उनके चारों ओर जैसे भूख और प्यास की दीवारें खड़ी हैं। भोजन के एक टुकड़े के लिए लड़ता हुआ यह बचपन विदीर्ण (टूटा हुआ) है, जहाँ हर आहट पर उनके सपनों का समूह टूट जाता है।

यानेभ्यः प्रसरति महान् घोष-कोलाहलोऽयं,
एतेषां तु प्रसरति तमो जीवनस्यान्तराले।
भिक्षा-लब्धैः कतिपय-पणैः कान्ति-रल्पास्ति या सा,
तिक्तादीनां परवशगता सर्वदा दुःख-मग्ना ॥ ३ ॥

भावार्थः- चमचमाती गाड़ियों के समूह से महान कोलाहल निकलता है, पर इन बच्चों के जीवन के अंतराल में केवल अंधकार फैला है। भीख में मिले कुछ सिक्कों में जो थोड़ी बहुत चमक (नूर) दिखती है, वह भी कड़वी, दीन और विवशता से भरी है।

अत्र - तत्र

अंचलः (स्नातकप्रथमवर्षः संस्कृतविशेषः)

अत्र संस्कृतं, तत्र संस्कृतम्।
आय हाय हाय सर्वत्र संस्कृतम्॥१॥
अत्र पुस्तिका तत्र पुस्तिका।
आय हाय हाय सर्वत्र पुस्तिका॥२॥
अत्र वेदना तत्र वेदना।
आय हाय हाय सर्वत्र वेदना॥३॥
अत्र सीटीका तत्र सीटीका।
आय हाय हाय सर्वत्र सीटीका॥४॥
अत्र ज्ञानं तत्र ज्ञानम्।
आय हाय हाय सर्वत्र ज्ञानम्॥५॥
अत्र संस्कृतं, तत्र संस्कृतम्।
आय हाय हाय सर्वत्र संस्कृतम्॥६॥

हस्तःकुटुम्बम्

मनीषा कुमारी (स्नातकतृतीयवर्षः संस्कृतविशेषः)

एषः स्नेहालुः तातः - अङ्गुष्ठः ।
निकटे निवसति ननु माता - तर्जनी।
ज्येष्ठा पुत्री दीर्घतमा - मध्यमा।
तस्याः भगिनी मनोरमा -अनामिका।
कनिष्ठबाला अन्ते च - कनिष्ठिका।
हस्तकुटुम्बं मम पश्य।
हस्तद्वयेन प्रणमामि।
आशीर्वादं विन्दामि।

'अल्पस्य हेतोर्बहु हातुमिच्छन् विचारमूढः प्रतिभासि मे त्वम्'

कुमारः आदर्शः
परास्नातकप्रथमवर्षीयः

कविकुलगुरुर्महाकविकालिदासः भारतीयवाङ्मयस्य देदीप्यमानं नक्षत्रं वर्तते। तत्र नास्ति काचित् विप्रतिपत्तिः। कवेः नैकेषु क्षेत्रेषु दक्षता वर्तते किन्तु मदीयदृष्टौ एषः कविः संवादकविर्वतेते। रघुवंशे पञ्चमे सर्गे रघुकौत्ससंवादो भवतु, कुमारसम्भवे पार्वतीब्रह्माचारीसंवादो वाऽत्र दिलीपसिंहासंवादो भवतु।

प्रसङ्गोऽस्ति यत् कामधेनुसुतानन्दिन्याः सेवार्थं रघुः वसिष्ठमहर्षिणा आज्ञापितोऽस्ति। एकदा वने एषा गौः एकेन कुम्भोदरनामकेन सिंहेन आक्रान्ता। यतोहि सिंहः एषः शिवानुकम्पापात्रः अत एव तं हन्तुं नास्ति रघुर्समर्थः।

तदा निवेदितः -

स त्वं मदीयेन शरीरवृत्तिं देहेन निवर्तयितुं प्रसीद।
दिनावसानोत्सुकबालवत्सा विसृज्यतां धेनुरियं महर्षेः।।

अर्थात् मदीयदेहेन स्वबुभुक्षां शमित्वा मयि प्रसन्नो भव यतोहि आश्रमे बद्धोऽस्याः बालवत्सः बुभुक्षितः आस्ते।

तदा सिंहः भूयोऽपि किञ्चित् स्मितं कृत्वा प्रत्युक्तवान् -

एकातपत्रं जगतः प्रभुत्वं नवं वयः कान्तमिदं वपुश्च।
अल्पस्य हेतोर्बहु हातुमिच्छन् विचारमूढः प्रतिभासि मे त्वम्।।

पुनरपि -

भूतानुकम्पा तव चेदियं गौरेका भवेत्स्वस्तिमती त्वदन्ते।
जीवन्पुनः शश्वदुपप्लवेभ्यः प्रजा प्रजानाथ पितेव पासि।।

अत्र तत्त्वद्वयमस्ति। धर्मतत्त्वं भौतिकतत्त्वञ्चेति। गुरोराज्ञया नन्दिनीं सः सेवते अतो नन्दिनी अत्र धर्मतत्त्वं, राज्ञः दिलीपस्य चक्रवर्तित्वं नवयौवनं कान्तमिदं वपुश्च, एतानि सर्वाणि भौतिकतत्त्वानि।

अत्र दृष्टिद्वयमस्ति। सिंहस्य अक्ष्णा पश्यामश्चेत् दिलीपः मूढ इव प्रतिभाषसे यतोहि तेन देहत्यागेन एकस्याः गवेर्रक्षणं भविष्यति किन्तु दिलीपे जीवति सति लोकरक्षणं भविष्यति।

किन्तु एतत्सर्वं प्रलोभनं दत्त्वा सिंहः राज्ञः दृष्टिं दूषयितुं प्रयतते किन्तु सफलो न जातः। इक्ष्वाकुकुलभूषणः महाराजः दिलीपः धर्मासक्तः कर्तव्यपारायणश्च। का परम्पराऽस्ति वंशस्यास्य? तदा प्रथम एव सर्गे कथितं महाकविना

त्यागाय संभृतार्थानां सत्याय मितभाषिणाम्।
यशसे विजिगीषूणां प्रजायै गृहमेधिनाम्।।

इति वंशपरम्परामनुस्मृत्य अत्यन्तमार्मिकवाक् दिलीपेनोक्ता -

किमप्यहिंस्यस्तव चेन्मतोऽहं यशः शरीरे भव मे दयालुः।
एकान्तविध्वंसिषु मद्विधानां पिण्डेष्वनास्था खलु भौतिकेषु।।

अर्थात् केनापि कारणेन भवता चिन्त्यते यत् अहमवध्यस्तर्हि भवान् मे यशोरुपशरीरेऽनुग्रहं विधाय, नश्वरशरीरभक्षणेन मम विशुद्धां कीर्तिं रक्षतु। तात्पर्यमस्ति यत् स्वसर्वस्वं त्यक्त्वाऽपि एषः राजा स्वधर्मं रक्षति - स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।

अधुना विषयस्यास्यालोके अनेकक्षेत्रेषु विचारयितुं शक्नुमो वयम्। यदि इतिहासे दृष्टिपातं कुर्मश्चेत् किमपि नवीनं न सम्पादितं दिलीपेन तत्र। राज्ञा शिविनाऽपि कपोतरक्षा कृता, महर्षिणा दधीचिनाऽपि स्वास्थित्यागं कृतम्। तादृशः भारतीयपरम्परायामनेकमहापुरुषाः बभूवुः।आपाततः महापुरुषाः तात्कालिकसमाजे मूढा एव प्रतिभान्ति। प्रायस्ते दूरदृष्टिगामिनः अतः श्रेयप्रेयमार्गयोः श्रेयसमङ्गीकृत्याचरन्ति। कदाचित् कपिलवस्तुनगर्याः वैभवमैश्वर्यं विहाय सिद्धार्थोऽपि मूढ एव आसीत्। किं सत्यं किमसत्यं ज्ञानार्थं त्यक्तगृहो मूलङ्करोऽपि मूर्ख एव आसीत्। किन्तु किं जातम्? एकः सिद्धार्थतः बुद्धो बभूव एको मूलशङ्करात् स्वामिदयानन्दसरस्वती जातः ।

अस्माकं जीवनेऽपि नित्यप्रति अयं सङ्घर्षो जायते यत् धर्मतत्त्वं रक्षितव्यं यत्र तात्कालिकसमये नास्ति सुखत्वं वा भौतिकमार्गमनुसृत्य तत्क्षणे प्रसन्नाः भवामः ।

यत्तदग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम्।
तत्सुखं सात्त्विकं प्रोक्तमात्मबुद्धिप्रसादजम्।।

इत्येव सात्त्विकसुखस्य परिभाषा गीतायामपि भगवता कथिता। अत्रापि दिलीपः यथैव स्वधर्मं रक्षति यतोहि सोऽपि जानाति - धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः।

Pragya Jain
B.Sc. (H) Mathematics

Pragya Jain
B.Sc. (H) Mathematics

HANSRAJ COLLEGE

— UNIVERSITY OF DELHI —

TEL: 011-27667458, 27667747, Email: principal_hrc@yahoo.com
Website: www.hansrajcollege.ac.in